अहिंसा प्रचारक उपदेश माला पुष्प नं० २

जीवन सुधार की

॥ कुञ्जी ॥

अर्थदाता

श्रीमान् जवानमलजी केशरीमलजी सा० मुणोत
पाली वालों की तरफ से श्रीमान् सरल
स्वभावी सेठ मिश्रीलालजी सा० मुणोत

लेखक—बा० ब्र० मुनि श्री मोहनऋषिजी
संशोधक—आ० मुनिश्री चुन्नीलालजी महा० सा०

प्रकाशक—चिम्मनसिंह लोढा मन्त्री
श्री अहिंसा प्रचारक सभा-ब्यावर।

प्रथम आवृत्ति	न्योछावर	वीर सं० २४५७
१०००	दो आना	वि० सं० १९८८

॥ ॐ ॥

प्राक् वक्तव्य ।

इस पुस्तिका का छपा हुआ बहुतसा हिस्सा मैंने देखा है। यह कोई पुस्तक लिखने के निमित्त से नहीं लिखी गई है।

बाल ब्रह्मचारी वैराग्य मूर्ति शान्त स्वरूप, मौन-योग प्रेमी मुनिश्री मोहनऋषिजी महाराज ने प्राकृतिक एकान्त स्थान में रहने की इच्छा से भिणाय (जिला अजमेर) के बाहर के एक उद्यान में सं० ११८७ का चातुर्मास किया था।

उस समय मैं उनके दर्शनार्थ अनेक देशावर रहने वाले श्री मन्त एवं विद्वान् यात्रिक आते रहते थे। मुनिश्री अखंड मौन में रहने पर भी अपनी विचार धाराओं को पत्रारूढ़ करते थे और यात्रियों को निराश न करने के वास्ते रात्रि का समय ज्ञानचर्चा के वास्ते देते थे।

मुनिश्रीने रात्रि को भी सुखासन व गाढ़ निद्रा का त्याग किया था। केवल बैठे २ ही २-३ घण्टों में श्वांस का उदर मिटा लेते थे। उनके मौन के भाषा रूप जो वचन प्रवाह निकलता था वह अद्भुत था उसे सुनने वाले स्तब्ध हो जाते। ऐसे वचनों का पान किया ही करें, ऐसा प्रत्येक श्रोता का दिल हो जाता, किन्तु अखण्ड सेवा करने का सांसारिक व्यौपारियों को अवसर कैसे प्राप्त हो

तद्यपि उस आत्मविकाशिनी वाक् धारा का अल्पांश भी मिलता रहे ऐसी प्रबल इच्छा तो हर एक आगन्तुक की रहती थी।

इसस कितनेक श्रीमन्तों ने अपनी तरफ से एक लेखक को रक्खा था, जोकि यथा शक्ति मुनिश्री की वागधारा व लेखनी से लिखे हुए शब्दों का सग्रह करे।

- निर्मल आत्मा की अन्तरङ्ग आवाज इतनी ही निर्मल और हृदय को सीधी लगने वाली होती है। आते जाते हुए भक्तों को जो कुछ कहा जाता था, ठीक २ व साफ साफ कहा जाता था। जो कि उनके हित के लिये आवश्यक था। यह उपदेश उन्हीं को उद्देश कर था तथापि अन्य उत्कर्ष के ग्राहक आत्माओं को भी बड़ा माननीय व आदरणीय था। इस वास्ते इस उपदेश संग्रह में से कुछ हिस्सा लेकर छपाने की बहुत से आत्मार्थियों की इच्छा हुई। किन्तु श्री मिश्रीमलजी सा० मुणोत ब्यावर निवासी ने अपनी तरफ से सारा खरच देकर श्री अहिंसा प्रचारक सभा द्वारा इस संग्रह को छपवाया और इस प्रकार वे इस बहु मूल्य उपदेश को जनता के सामने रखने का पुण्य सेठ श्री मिश्रीमलजी मुणोत ने कमा लिया।

इस उपदेश संग्रह का नाम 'जीवन-सुधारकी कुंजी' रखने में प्रकाशक ने बड़ी बुद्धिमत्ता की है। वास्तव में यह गुणनिष्पन्न नाम है।

ऐसे आप (ऋषि) रचना पर आज वक्तव्य में क्या लिखूं सूर्य्यके उदय के पहिले ही स्वयमेव प्रकाश हो जाता है तो सूर्य्य का तो कहना ही क्या ! उसकी पहिचान दीपक से कराने की आवश्यकता नहीं रहती। इसी तरह "जीवन-सुधारकी कुञ्जी" ही पाठकों के सामने आ रही है, यह स्वयं ही अपना भाव प्रकट करेगी।

इस कुञ्जी से जीवन-सुधार का मार्ग खुले। अनेक आत्माओं को मार्ग दर्शक बन और आत्मोत्कर्ष करें, यही मेरी भावना है।

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी
महावीर जयन्ती
विक्रमीसं० १९८८
वीरसं० २४५७

आत्म सुधारका अभिलाषी—
धीरजलाल के० तुरखिया,
अधिष्ठाता, जैनगुरुकुल-ब्यावर।

✿ श्री ✿

सरल स्वभावी श्रीमान् सेठ मिश्रीमलजी मुणोत
ब्यावर—राजपूताना।

आभार प्रदर्शन

इस पुस्तक की छपाई का तमाम खर्च सरल स्वभावी श्रीमान् सेठ मिश्रीमलजी सा० मुणोत ने दिया है। शायद जैन-समाज आपके नाम से पहिले भी परिचित होगा। आप कोई विशेष धनाढ्य नहीं हैं किन्तु आपका हृदय विशेष धना ढ्य है। आप धार्मिक कृत्यों में हमेशा सबसे आगे रहते हैं। खास बात तो यह है कि आप में साम्प्रदायिकता का भेद भाव बिल्कुल नहीं है। आपकी उदारता की हम मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हैं और हम शासन-रक्षक देव से यही प्रार्थना करते हैं, कि आपकी उदारता दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़े। श्रीमान् सेठ साहब को इस उदारता के लिये धन्यवाद।

आत्मार्थी मुनि श्री मोहनऋषिजी महाराज सा० के तो ये विचार हैं तथा सुधार-प्रेमी आत्मार्थी, मुनिश्री खुशीलालजी महाराज साहब ने इसका संशोधन किया है। अतः सभा भी उक्त मुनिराजों का आभार मानती है। प्रस्तावना लिखने में श्रीमान् धीरजलाल जी के० तुरखिया ने जो कष्ट उठाया है अतः श्रीमान का भी यह सभा आभार मानती है।

मुनिश्री के पास रहने वाले एक लेखक ने इसका सग्रह किया था तथा प्रेस भी हमसे दूर है, अतः त्रुटियों का रहना सम्भव है। अतः हम पाठकों से विनम्र प्रार्थना करते हैं कि आपके पढ़ने में जो त्रुटियां आवें उन्हें आप सभा के पास भेजने की कृपा करें। ताकि दूसरी आवृत्ति में उनका सुधार कर दिया जावे।

भवदीय—

चिम्मनसिंह लोढा,

मन्त्री।

आभार प्रदर्शन

इस पुस्तक की छपाई का तमाम खर्च सरल स्वभावी श्रीमान् सेठ मिश्रीमलजी सा० मुणोत ने दिया है। शायद जैन-समाज आपके नाम से पहिले भी परिचित होगा। आप कोई विशेष धनाढ्य नहीं हैं किन्तु आपका हृदय विशेष धनाढ्य है। आप धार्मिक कृत्यों में हमेशा सबसे आगे रहते हैं। खास बात तो यह है कि आप में साम्प्रदायिकता का भेद भाव बिल्कुल नहीं है। आपकी उदारता की हम मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हैं और हम शासन-रक्षक देव से यही प्रार्थना करते हैं, कि आपकी उदारता दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़े। श्रीमान् सेठ साहब को इस उदारता के लिये धन्यवाद।

आत्मार्थी मुनि श्री मोहनऋषिजी महाराज सा० के तो ये विचार हैं तथा सुधार-प्रेमी आत्मार्थी, मुनिश्री सुशीलालजी महाराज साहब ने इसका संशोधन किया है। अतः सभा भी उक्त मुनिराजों का आभार मानती है। प्रस्तावना लिखने में श्रीमान् धीरजलाल जी के० तुरखिया ने जो कष्ट उठाया है अतः श्रीमान् का भी यह सभा आभार मानती है।

मुनिश्री के पास रहने वाले एक लेखक ने इसका संग्रह किया था तथा प्रेस भी हमसे दूर है, अतः त्रुटियों का रहना सम्भव है। अतः हम पाठकों से विनम्र प्रार्थना करते हैं कि आपके पढ़ने में जो त्रुटियां आयें उन्हें आप सभा के पास भेजने की कृपा करें। ताकि दूसरी आवृत्ति में उनका सुधार कर दिया जाये।

भवदीय—

निम्मनसिंह लोढा,

मन्त्री।

जीवनसुधारकी कुञ्जी ।

प्रथम भाग ।

एक दर्शनार्थी धनाढ्यको उपदेश —

(१)

(१) आप जब मानव भवमें पधारे थे तब बिना चेताये पधारे थे ।

(२) मानव भवको जब छोड़ेंगे तब भी अचानक ।

(३) यहांपर भी अचानक आना हुआ ।

(४) जन्म मरणादि सब क्रियायें अचानक होती हैं ।

(५) मानव जन्म आश्चर्यसे भरा हुआ है ।

(६) असंख्य देव, असंख्य नारकी और अनन्त तिर्यंचका यही मानव भव अत्यन्त दुर्लभ है ।

(७) आप श्रीमान्ने अनन्त दुर्लभ पदार्थको सुलभ बना दिया ।

(८) अनन्त सुलभको अनन्त दुर्लभ मान रहे हो (मानव भव पानेमें जो कष्ट भोगे उससे अनन्तवें भागके कष्ट ज्ञान पूर्वक चारित्र पालनमें समताके सहन करलें तो निश्चयसे शीघ्र मोक्ष हो; इस अपेक्षासे अनन्त सुलभ मोक्षको अनन्त दुर्लभ मान रहे हो) ।,

(९) मानव जन्म पैसे कमानकेलिए, मकान् बनानेकेलिये, सन्तान उत्पन्न करनेकेलिए और उनकी व्यवस्था करनेकेलिए, धनको कमाने और उसका नाश करनेकेलिए, रोज नया खाने और पुराना निकालनेकेलिए नहीं है ।

(१०) मानव जन्म अनन्त कीमती है ।

(११) ८३९९९९९ जीवयोनिका विजय कर लिया । अब तो यह नाव मोक्ष-द्वारपर खड़ी है । भीतर जाओ तो मोक्ष है, नहीं तो जहाँसे पधारे थे वहींपर (नरक-निगोदमें) फिर पीछे पधारना होगा ।

(१२) ८३९९९९९ जीवयोनिका आपको अनन्तकालमें अनुभव है और मोक्ष महलका द्वार (त्यागका आनन्द) आज ही देखा है । इससे धमकक्‍र वापिस न लौटिएगा ।

(१३) यह अवसर अनन्तकालके बाद मिला है ।

(१४) जीवकी जैसी गति होनेवाली होता है उसकी गति वैसी ही हो जाती है ।

(१५) आज आपकी मति कहाँ जा रही है ?

(१६) मानव भवका मूल्य समझिये ।

(१७) थोड़ा बुद्धि परभवकेलिये लगाइयेगा, इसमें कौड़ीका भी आपको खर्च नहीं है।

(१८) घर और सन्तानकी कितनी चिन्ता है ?

(१९) क्या उतना आपकी सुधकी भी ?

(२०) इस पापारम्भका फल कौन भुगतेगा ?

(२१) क्या छहकायके जीवको मानते हो ?

(२२) रोज कितने जीवोंसे वैर बँधता है ?

(२३) उस वैरसे कैसे मुक्त होओगे ?

(२४) एक रोटीका कवल कैसे बनता है ?

(२५) रोटीका एक कवल खा जानेमें कितने जीवोंकी हिंसा होती है ?

(२६) यह जो नवीन मकान बनाया है, उसमें कौन रहेगा ? इसमें कितने पृथ्वी, पानी, अग्नि, हवा और त्रसजीवोंका आरम्भ हुआ ? (मकान बनानेमें हजारों रुपये लगे, वे किसने घोरपापसे मनुष्य समूहको चूसकर इकट्ठे किये हैं ? यह गरीबोंके खून और हड्डियोंसे चुनी हुई हवेली है यह कितना सुख देगी ?)

(२७) इस पापका फल कौन भुगतेगा ?

(२८) क्या संसारीको पाप करनेसे पाप नहीं लगता है ?

(२९) क्या संसारीको सब अपराध माफ हैं ?

(३०) आपमें इतनी कोमलता कहांसे आई ? (कि तप संयमपालनमें कायरता दिखलाते हो। आजीविकाकेलिए घोर परि

श्रम करते हो, किन्तु आत्म हित जो धनसे अनन्तगुणा ज्यादा सुखदायी है उसकेलिए प्रमाद करते हो। सब पूँजी निपके पुत्र या गोदके पुत्रको दोगे, परन्तु खुदने पाप संचय किया है सो उसके कड़वे फलमें थोड़ा विश्राम पानेको—जैसे घोड़े का राजाके यहां रहना आदि, दुःखमें थोड़ी शान्ति पानेकेलिये सब धनको दुःखियोंके दुःख विनाशमें न देवे एक भोगीको देकर नरकमें क्षेत्रकी अनन्तवेदनाके सिवाय परमाधर्मीकी वेदनाकी वृद्धि क्यों कर रहे हो?)

(३१) क्या आप शालिभद्रसे भी विशेष कोमल हैं?

(३२) धन्नाजी, शालिभद्रजी जम्बूजी, गजसुकुमालजी, सुबाहुकुमारजी आदिने गलती तो नहीं की?

(३३) उनमें आप-जैसी बुद्धि क्यों नहीं आई?

(३४) उन्होंने इतनी सम्पत्तिको क्यों लात मार दी?

(३५) क्या वे नसीबमें दुःख लिखाकर लाये थे?

(३६) क्या आपके नसीबमें सुखका समुद्र है?

(३७) आयुष्य घटता है या बढ़ता है?

(३८) आयुष्य घटता हो तो उपाधि घटाइयेगा।

(३९) आयुष्य बढ़ता हो तो उपाधि बढ़ाइयेगा।

(४०) क्या आप-जैसे धनवानका मृत्यु आयगा?

(४१) क्या आप पांच-पचीस थैलियें मरकाके मृत्युको रोक सकेंगे?

(४२) क्या आपकी थैलियोंपर मृत्यु ध्यान देगो?

(४३) क्या आपपर मृत्यु दया करगी?

(४४) क्या आपको मृत्यु प्रिय है ?

(४५) आपको मृत्युसे कहीं मित्रता तो नहीं है ?

(४६) आपने दाम कौनसी गतिके दिये हैं ? (कुछ पुण्यकर्म किये हैं ?)

(४७) यह डिब्बा (देहधारी आत्मा) कौनसे स्टेशनपर जावेगा ?

(४८) कौनसी गतिके डिब्बेमें विराज रहे हो ?

(४९) उस स्टेशनपर आपका क्या होगा ?

(५०) आप पधारोगे तब आपके साथ कौन आवेगा ?

(५१) इतना प्रेम रखनेपर भी ग्राम, घर, कुटुम्बवाले आपको क्यों निकाल देंगे ?

(५२) ऐसे दगाबाज, स्वार्थी और नीच संसारी ग्राम, घरको लात क्यों नहीं मारदेते ? जो आप त्याग करें तो विरोध करते हैं और पाप करें तो प्रेम करते हैं ।

(५३) जो आसामी उधार लेकर रुपये न देवे उसको क्या धीरोग ?

(५४) जो कुटुम्ब श्वास निकलते ही जलानेको तैयार है—स्वार्थमें हानि पहुँचते हो जिंदा हालतमें भी अपमान, तिरस्कार व त्याग करनेको तैयार है—उसमें इतना मोह क्यों ?

(५५) धन किसलिये कमाते हो ?

(५६) धन मिलनेसे क्या फायदा ?

(५७) आपको धन मिला तो अच्छा, कि नहीं मिलता तो अच्छा होता ?

(५८) धन मिलनेसे आपने क्या किया ? (पाप बढ़ाये)

(५६) धन नहीं मिलता तो क्या करते ? (थोड़े पाप)

(६०) फिर धन कमाकर क्या करोगे ? (ममतामें अनादि वासना पोषेंगे और दुर्गतिके अधिकारी बनेंगे। यदि द्रव्य धनकी इच्छा छोड़कर धर्मधन कमावेंगे तो सुगतिमें जावेंगे।)

(६१) जिसके खानेमें प्राण जायें वह विष है कि अमृत ? (हलाहल विष)

(६२) पहननेपर जो काट खाय वह हार है कि सांप ?

(६३) जिसको छूनेसे मनुष्य जल जाय, वह अग्नि है कि रत्न ?

(६४) जिसमें बैठनेसे स्वयं डूब जाय वह नाव है कि याव ?

(६५) धनसे धर्म कमाया या पाप ?

(६६) फिर धनसे क्या कमाओगे ?

(६७) धन बढ़े तो अच्छा कि घटे तो अच्छा ?

(६८) धन बढ़नेसे पाप बढ़े या धन घटनेसे पाप बढ़े ?

(६६) सुखी धनवान् या निर्धन ? (अज्ञानमें—धनी विषय विकार, मान बड़ाइसे दुःखी है व निर्धन चिन्ता शोक भय तथा बुरे कामोंसे दुःखी है और ज्ञानसे-धनी मरणसमें, मानादेयी, माना-यत् ममता निर्मोह व शुभकर्मोंसे सुखी व इसमेंही मुनि आदि वैराग्यसे सुखी हैं। अतः सुखका कारण एक ज्ञान ही है और दुःख का कारण एक अज्ञान ही है।)

(७०) भगवान्ने सुखी किसको कहा है ? (ममता छोड़न ..)

(७१) क्या भगवान्‌को कम अनुभव था ?

(७२) भगवान्‌ने धनको कैसा बताया है ?

"धण दुक्खविवड्ढणं महाभयावहं"—उत्तराध्ययन अ० १६।

धन दुःखोंको अतिशय बढ़ानेवाला तथा महाभयका कारण है। धनसे ही अनेक पाप सूझते हैं। इसीसे श्रीभगवती सूत्रमें फरमाया है कि धर्मी जीव बलवान्, बुद्धिवान्, समृद्धिवान् व जागता हुआ भला है व अधर्मी जीव दुर्बल, मन्दबुद्धि निर्धन व सोया हुआ भला है। धर्मी जीव शक्तियोंको सन्मार्गमें लगाता है, और अधर्मी कुमार्गमें लगाता है।

(७३) आप धनको कैसा मान रहे हो ? (मोहवश सुखका देनेवाला और ज्ञान होनेपर दुःखका देनेवाला)

(७४) दोनोंमेंसे कौन सच्चे ?

(७५) क्या भगवान्‌की बात आपको सच्ची लगती है ?

(७६) सच्ची है तो क्या उनकी आज्ञा पालते हो ?

(७७) शेठकी आज्ञा नौकर न माने तो वह शेठ है या कौन ?

(७८) पतिकी आज्ञा स्त्री न माने तो क्या वह पति है ?

(७९) प्रभु आपकेलिये प्रभु है या नहीं ?

(८०) आप यह कितना माहम कर रहे हो ?

(८१) क्या आप अजर अमर हैं ?

(८२) आपने अपने मनमें क्या निश्चय कर रक्खा है ?

(८३) उस निश्चयका क्या फल होगा ?

(८४) अब कितने दिन यहां ठहरना है ?

(८५) कहाँ जाना है ?

(८६) क्यों मालूम नहीं है ?

(८७) शालिभद्रजी कहीं मोले तो नहीं थे ?

(८८) उस जगह यदि आप होते तो क्या करते ?

(८९) आपके स्थानपर यदि शालिभद्रजी हों तो क्या करें ?

(९०) क्या नन्दन मनिहारका नाम सुना है ?

(९१) यह मरकर मेंढक क्यों हुआ ? (ममतासे)

(९२) उसने बावड़ी परोपकारकेलिये बनाई थी।

(९३) आपने मकान किसलिये बनाया ? (निज सुखकेलिए)

(९४) दोनोंमेंसे ममता किसको है ?

(९५) क्या यह मकान धर्मोको मददगीर होगा ? (धर्म ध्यानकेलिए)

(९६) क्या मुसाफिरोंको ठहरने देंगे ?

(९७) आप दानोंमेंसे किसको ममता विशष है ? (मुझे)

(९८) यह मेंढक हुआ तो ममत्व रखनेवाला क्या देव बनेगा ? (कभी नहीं)

(९९) पापकार्य करते कभी हाथ धूजे थे ?

(१००) कभी पश्चात्ताप किया था ?

(१०१) पांचसौ रुपयेका नोट यदि गुम हो जावे तो आप क्या करें ? (अमूल्य मनुष्यभव गुम हो रहा है, उसकेलिए क्या चिन्ता होती है ?)

(१०२) क्या आत्मा भारी होनेसे इतना रंज किया था ? (आत्माको पापकर्मसे भारी करके खुशी होते हैं, इतना मोहका नशा चढ़ा हुआ है ।)

(१०३) क्या अब रंज करोगे ?

(१०४) उस आरम्भके कार्यको देखकर खुश होते हो या नाखुश ?

(१०५) इतनी चिन्ता स्वर्गमें या मोक्षमें घर बनानेकी होती तो ? (कर्मीके यहाँ चले जाते)

(१०६) विशेष परिग्रहसे आरम्भ घटाओगे कि बढ़ाओगे ? (आज तो बढ़ रहा है)

(१०७) क्या ससारी कार्य कम खर्चमे नहीं होते ? (जिसे पापसे बचना होवे, वह पापके खर्च घटावे ।)

(१०८) तिजोरीमें जमा होता हुआ धन क्या अच्छे काममें नहीं लगता ? (जिसे परलोककी श्रद्धा है वह इस लोकमें अपने भाइयोंके सुखसे निजको सुखी मानेगा । ऐसी दीर्घ दृष्टिवाला अपना धन अच्छे कार्योंमें लगावे । अच्छे कामोंसे निश्चयसे इस लोक और परलोकमें सुख मिलता है किन्तु मोही जीव उसे नहीं समझ सकते; औरोंको सुखी करनेसे खुदका कोई शत्रु नहीं रहता, चित्तमें प्रसन्नता रहती है, विद्या पानेसे या शिक्षित समाजमें रहनेसे आज लज्जा भय व जाति बन्धनसे जो कुरियाजोंका पालन करना पड़ता है वह सहज छूट जाता है ।

(१०९) धनका नाश, आत्माका नाश, और पुण्यका नाश करके भी लग्न व्यवहार में फिजूल खर्च पसन्द करोगे ?

(११०) सादगीसे धन पुण्य और आत्माकी रक्षा होती है और इस लोक और परलोकमें सुख मिलता है।

हरिगीत (श्रीमद् रायचन्द्रजी से)

बहु पुण्यकेरा पुंजथी शुभदेह मानवनो मल्यो,
तोये अरे भवचक्रनो फेरो नहीं एक्के टल्यो,
सुख प्राप्त करतां सुख टले छे लेश ए लक्षे लहो,
क्षण क्षण भयंकर भावमरणे, कां अहो राची रहो ! १

लक्ष्मी अने अधिकार वधतां, शुं वध्युं ते तो कहो,
शुं कुटुम्ब के परिवारथी वधवापणुं ए नय ग्रहो,
वधवापणुं संसारनुं नर देह ने हारी जवो,
एनो विचार नहीं अहोहो एक पळ तमने हवो। २

निर्दोष सुख निर्दोष आनँद, ल्यो गमे त्यांथी भले,
ए दिव्य शक्तिमान् जेथी जंजिरेथी नीकळे।
पर वस्तुमां नहीं मुंझवो एनी दया मुजने रही,
ए त्यागवा सिद्धांत के परचात दुःख ते सुख नहीं, ३

ए प्राप्त करवा वचन कोनुं सत्य केवल मानवुं,
निर्दोष नरनुं कथन मानो, एह जेणे अनुभव्युं।
रे आत्म तारो आत्म तारो शीघ्र एने ओळखो,
सर्वात्मनां समदृष्टि द्यो आ वचनने हृदये लखो। ४

धनवान् दर्शनार्थी प्रति उपदेश—

(२)

श्री भाई तथा श्री भाईके प्रति

१-आप जैसे धनवान् और बुद्धिमान् कितने हैं ?

२—आपने इस धन और बुद्धिका क्या उपयोग किया ? (बाह्य सुख लौकिक शोभा और गरीबोंको चूसनेका और मनुष्य समूहको युक्ति पूर्वक नष्ट करनेके हजारों कमानेके व्यापार किये; तथा पापरूपी पहाड़को चढ़ानेकेलिए थोड़ी दान-रूपी कुदाल चलाई।)

३ यह बुद्धि कर्म काटनेमें लगाई कि बढ़ानेमें ?

४-बुद्धि और धनसे क्या फ़ायदा ?

५-आपने बुद्धि और धनसे फ़ायदा उठाया या नुक़सान ?

६-यह सम्पदा आपको पुण्योदयसे मिली है या पापोदयसे ?

७-पुण्यका उदय कब समझा जाता ? (सब पुण्य सामग्रीको सत्कार्यमें लगानेसे)

८-पापका उदय कब समझना चाहिये ? (ममत्वसे)

९-आप अपने लिए क्या निर्णय कर रहे हो ?

१०-अब भविष्यमें क्या करना चाहते हो ?

११-आजतक क्या किया ?

१२-ऐसे जीवनमें श्वासोच्छ्वास पूरे होवें तो क्या होवे ?

१३-अब क्या इरादा है ?

१४-इतनी सम्पदा मिलनेका आशय क्या है ?

१५-आपने सदुपयोग कितना किया ? (मनमेंसे पैसे भर)

(पूंजी, धन, परिग्रहको, सकल ज्ञानियोंने अनन्त दुःखके बढ़ान वाला फरमाया है। इसीसे गृहस्थको रोज चिन्तनकी, भावना-मनोरथमें पहिले यही फरमाया है कि आरम्भ और परिग्रह दुर्गतिके दातार, दुःखकी जड़ और क्रोध मान माया लोभ बढ़ान वाले, जन्म मरणका कारण सर्वथा प्रकारसे छोड़ूंगा, सब मुनी होऊंगा। यहां आरम्भका अर्थ—पापमय प्रवृत्ति है। इसमें सब जीवोंकी हिंसा तथा सब प्रकारके विषय-भोगोंका समावेश होता है। आजकल अंगुलियोंको रक्षातुल्य पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और वनस्पतिकी रक्षापर खूब लक्ष्य दिया जाता है परन्तु सिरकी रक्षा तुल्य मनुष्यहितकी तरफ ध्यान नहीं दिया जाता, उल्टा मनुष्योंको चूसकर छोटे-छोटे जीवोंकी दया पाली जाती है। इसीसे धर्मी लोगोंके प्रति बहुतसे मनुष्योंका आदर नहीं रहा है। उनसे धर्मसे घृणा करने लगा है। यदि धर्मका काम अहिंसा है तो पहिले मनुष्यकी अहिंसा फिर पशु, पक्षी, जलचरादि पञ्चेन्द्रियकी रक्षा, फिर पतङ्ग कीड़े, कीड़े आदिकी रक्षा, फिर मिट्टी जलादिकी रक्षा, इस प्रकार क्रमशः विचारसे अहिंसाधर्मका पालन किया जावे तो धर्मको सब मनुष्य स्वीकार कर लेवें। धनका सम्बन्ध जीवनसे चाहिये, जो धर्म जीवनसे—इस लोककी शान्तिसे दूर है उसे मुर्दी भर मनुष्य नाम मात्र पालते हैं।

दर्शनार्थी भक्तके प्रति उपदेश—

श्री भाईके प्रति

१–साता और असाताका देनेवाला कोई नहीं है।

२–कर्मानुसार साता और असाता मिलती है (कर्तव्यमात्र कर्मरूप बनते हैं अत: मन, वाणी और कायाको शुभकार्यमें लगाना चाहिये)।

३–किसीका दोष न निकालना चाहिये। (वास्तवमें अपने अशुभ कार्य ही अपने शत्रु हैं और अपने शुभकाय ही अपने मित्र हैं।)

४–अपनी आत्माका दोष देखे यह ही समदृष्टि है।

५–जो दूसरेके दोष देखे वह मिथ्यादृष्टि है।

६–जो दूसरेके गुण देखे वह समदृष्टि।

७–जिनकी सेवामें असंख्यदेव थे, वैसे केवलज्ञानी प्रभु श्रीमहावीरको भी कष्टके निमित्त मिले। वास्तवमें कष्ट देनेवाला कोई नहीं था।

प्रभुके अशुभकर्म थे (प्रभुको भी कर्मोंने नहीं छोड़ा तो अपनेको कैसे छोड़ेंगे। इसलिये नये कर्म मत बाँधो और पुराने कर्म दान, शील, तप, भावनासे क्षय करो। नहीं तो उदयमें आकर तीव्र पीड़ा देकर फल देंगे। जैसे अजीर्ण हुआ यदि उपवास करले तो आराम होजाय और खानेका लालची बन तपश्चर्या न करे तो

१३–अब क्या इरादा है ?

१४–इतनी सम्पत्ति मिलनेका आशय क्या है ?

१५–आपने सदुपयोग कितना किया ? (मनमेंसे पैसे भर)

(पूंजी, धन, परिग्रहको, सकल ज्ञानियोंने अनन्त दुःखके बढ़ाने वाला फरमाया है। इसीसे गृहस्थको रोज चिन्तनकी, भावना— मनोरथमें पहिले यही फरमाया है कि आरम्भ और परिग्रह दुर्गतिके दातार, दुःखकी जड़ और क्रोध मान माया लोभ बढ़ाने वाले, जन्म मरणका कारण सर्वथा प्रकारसे छोड़ूंगा, तब सुखी होऊंगा। यहां आरम्भका अर्थ—पापमय प्रवृत्ति है। इसमें सब जीवोंकी हिंसा तथा सब प्रकारके विषय-भोगोंका समावेश होता है। आजकल अनुयायियोंको रक्षातुल्य पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और वनस्पतिको रक्षापर खूब लक्ष्य दिया जाता है परन्तु जिसकी रक्षा तुल्य मनुष्यहितकी तरफ ध्यान नहीं दिया जाता, उल्टा मनुष्योंको चूसकर छोटे-छोटे जीवोंकी दया पाली जाती है, इसीसे धर्मी लोगोंके प्रति बहुतसे मनुष्योंका आदर नहीं रहा है। जगत धर्मसे अरुचि करने लगा है। यदि धर्मका अर्थ अहिंसा है तो पहिले मनुष्यकी अहिंसा, फिर पशु, पक्षी, जलचरादि पञ्चेन्द्रियकी रक्षा, फिर पतङ्ग, कीड़ी, कीड़े आदिकी रक्षा, फिर मिट्टी जलादिकी रक्षा, इस प्रकार क्रमशः विवेकसे अहिंसाधर्मका पालन किया जाये तो धर्मको सब मनुष्य स्वीकार कर लेवें। धर्मका सम्बन्ध जीवनसे चाहिये, जो धर्म जीवनसे—इस लोककी शांतिसे दूर है उसे मुट्ठी भर मनुष्य नाम मात्र पालते हैं।

दर्शनार्थी भक्तके प्रति उपदेश—

श्री माईके प्रति

१–साता और असाताका देनेवाला कोई नहीं है।

२–कर्मानुसार साता और असाता मिलती है (कर्तव्यमात्र कर्मरूप बनते हैं अत मन, वाणी और कायाको शुभकार्यमें लगाना चाहिये)।

३–किसीका दोष न निकालना चाहिये। (वास्तवमें अपने अशुभ कार्य ही अपने शत्रु हैं और अपने शुभकाये ही अपने मित्र हैं।)

४–अपनी आत्माका दोष देखे यह ही समदृष्टि है।

५–जो दूसरेके दोष देखे वह मिथ्यादृष्टि है।

६–जो दूसरेके गुण देखे वह समदृष्टि।

७–जिनकी सेवामें असंख्यदेव थे, वैसे केवलज्ञानी प्रभु श्रीमहावीरको भी कष्टके निमित्त मिले। वास्तवमें कष्ट देनेवाला कोई नहीं था।

प्रभुके अशुभकर्म थे (प्रभुको भी कर्मोंने नहीं छोड़ा तो अपनेको कैसे छोड़ेंगे। इसलिये नये कर्म मत बांधो और पुराने कर्म दान, शील, तप, भावनासे क्षय करो। नहीं तो उदयमें आकर तीव्र पीड़ा देकर फल देंगे। जैसे अजीर्ण हुआ यदि उपवास करले तो आराम होजाय और खानेका लालची मन तपश्चर्या न करे तो

बीमार बने और कई दिन पराधीनतासे भोजन छूटे और दुःख पावे, दुर्बल बने और कभी मृत्यु भी होवे वैसे कर्मों का है। वो उत्तम कार्यों से क्षय करदे तो हो सकता है। इसे अविपाक निर्जरा कहते हैं। फल दिये बिना ही बँधे हुए कर्म क्षय होते हैं।

८–श्रीपारर्श्वनाथ प्रभुको कमठदेवने कष्ट दिया। वास्तवमें कष्ट देनेवाले प्रभुके कर्म थे।

९–यदि प्रभुको साताका उदय होता तो कोई कष्ट नहीं दे सकता था।

१०–अपने अशुभ कर्मके निमित्तसे दूसरेकी अपनको असाता देने रूप बुद्धि बिगड़ती है।

११–निश्चयमें अपनी आत्माका दोष है और किसीका दोष नहीं है।

१२–परदेशी राजा–जैसे परम पुण्यशाली जीवको अपनी स्त्रीने जहर दिया और फाँसी देकर मार डाला।

१३–राजा श्रेणिक–जैसे परम पवित्र आत्माको अपने पुत्र कोणिकने जेलमें डाल दिया।

१४–भरत बाहुबल–जैसे चरम शरीरी भाई आपसमें लड़े थे।

१५–ऐसे महापुरुषोंको भी कुटुम्बका सुख नहीं मिला तो पंचम आरेके जीवोंको पूरी शान्ति कहांसे होवे।

१६–अज्ञान दशामें जीव अपनेको बहुत दुःखी मानता है।

१७-ज्ञानदशासे विचार करें तो अपनी आत्मा सबसे विशेष सुखी मालूम होगी।

१८-आज नरकमें असंख्य जीव दुःख भोग रहे हैं।

१९-स्थावरमें अनन्त जीव दुःख पा रहे हैं।

२०-पशु पक्षी और गरीब मनुष्य कितने दुःखी हैं!

२१-देश नेता कितना कष्ट उठा रहे हैं!

२२-देश नेता तो कष्टके सामने आते हैं और समभावसे सहन करते हैं।

२३-अपनको अशुभकर्मके योगसे कर्म उदय आते हैं। उनको भोगनेमें इतनी घबराहट क्यों? (ऐसी दशामें जैनीपना नहीं रहता।)

२४-श्रीकेवलज्ञानीको भी वेदनीय कर्म भोगना पड़ता है।

२५-तो अपन कौन है?

२६-समभावसे कर्म भुगतनेसे कटते हैं।

२७-विषमभाव रखनेसे कर्म नवीन बँधते हैं।

२८-गजसुकुमालजीने सोमलपर क्रोध किया होता तो वे मरकर कहाँ जाते? और समभाव रखनेसे ही मोक्ष पधारे।

२९-४९९ शिष्य समभाव रखनेसे मोक्ष पधारे। विषमभाव रखते तो कौनसी गति होती?

३०-सब प्रसंगमें समभाव रखना चाहिये।

३१—धर्मका मूल, सुखका मूल, मोक्षका मूल ज्ञान पूर्वक समभाव है।

रोगी धर्मप्रेमीको हित वचनोंका सन्देश--

१-संवत्सरी सम्बन्धी क्षमापना ।

२-आपके स्नेहीकी प्रेरणासे आपको सन्देश भेज रहा हूँ ।

३-आपका शरीर यह समाजकी सम्पत्ति है ।

४-आपकी सम्पत्ति यह समाजकी सम्पत्ति है ।

५-वेदनीय कर्मकी प्रबलताने आपको दबा दिया ।

६-आप कुछ दबे नहीं ।

७-जीवोंकी विराधना करनेसे वेदनीयका उदय होता है ।

८-जीवोंको शान्ति देनेसे वेदनीयका नाश होता है ।

९-शरीरकेलिये दवाई उपयोगी नहीं है ।

१०-यह अमेरिकनोंकी शोध है ।

११-विलायती दवाइयें बहुत पापसे बनती हैं ।

१२-अनार्यदेशकी दवाइयां अनार्यवस्तुसे बनती हैं ।

१३-इसकी अरुचि हो उसमें वृद्धि कीजिएगा ।

१४-ऐसे अवसरमें सत समागम अच्छा रहता है ।

१५-यहांके जलवायु अनुकूल थे ।

१६-द्रव्य और भाव रोगकी शान्तिका यह स्थान है ।

१७-सूक्ष्म प्रेरणासे भी उदासीनवृत्ति वाला विशेष क्या कर सकता है ।

१८-असाता वेदनीय आत्मा और शरीरको भेद बतलानेवाला ...वि करानेवाला परमगुरु है ।

१ –असाता वेदनीय शरीरकी अनित्यताका ज्ञान कराता है।

२०–असाता वेदनीय भाग उपभोगकी अरुचि घटाता है और आत्मदर्शन कराता है।

२१–असाता वेदनीय मिथ्यात्वसे माना हुआ शरीरका मोह छुड़ाता है।

२२–असाता वेदनीय धन और कुटम्बको जो शरणभूत मान रक्खा था, उनको अशरण समझाता है।

२३–मृत्यु समय वेदनीयका अनुभव कराता है।

२४–परलोकको भूले हुएको परलोकका विश्वास कराता है।

२५–शरीरको जो अजर अमर मान रखा था, उस मिथ्यामोहका दूर करता है।

२६–परलोकके लिए तैयारी करनेकेलिये सन्देश देनेवाला यह दूत है।

२७–सात कर्मोंका विकार भीतर छिपा हुआ है उन कर्मोंको क्षय करनेकी किसीको चिन्ता नहीं है, सब वेदनीय कर्मसे सब घबरा रहे हैं।

२८–सब कर्मोंमें वेदनीय कर्म पामर है, किन्तु पामर आत्माने उसको सब कर्मोंका सरदार समझ रखा है।

२९–जितना परिश्रम और चिन्ता असाता वेदनीय कर्मको दूर करनेकेलिये करते हो उतनी यदि और कर्मोंकेलिये की जाय तो एक भवमें मोक्ष है।

३०–किन्तु मोहके कारण मतिमें विभ्रम हुआ है। मोहनीय आदि महाभयंकर कर्मोंके वियोगसे रुदन और वेदनीयके संयोगसे

रुदन करना यह कितना आश्चर्य है ? (जैसे बालक तुच्छ खिलौने व रंगीन कागजके टुकड़ेको परम सुखदायी मानता है और घर जल जावे तो दुःखके स्थान अग्नि-ज्वालाको देख हँसता है। यही दशा मोही-अज्ञानी-बाल जीवोंकी है। वे शरीरके रोग, धनहानि, मानहानि कुटुम्बवियोगसे घबराते हैं—लेकिन आत्माके निजगुण नष्ट होरहे हैं, अनन्त आत्मिक सुख दूषित होकर रागद्वेष रूप व्याकुलता पूर्ण मिथ्या सुख दुःख पैदा हुए हैं परन्तु उसकी उसे चिन्ता नहीं। उल्टा विषय कषाय बढ़ाकर खुशी होते हैं और न बढ़नेपर नाखुश होते हैं।)

३१–ऐसे समयमें द्रव्य रोगमें शुद्ध दवा उपकारक है और भावरोगमें पवित्र धर्ममय वातावरण।

३२–यहाँपर यदि साथमें भाई जैसे मनोहर स्नेही हों तो आपको प्रसन्नता रह सकती है अन्यथा एकान्तकी महान् तपश्चर्या प्रतीत होगी। तपश्चर्यामें लाभ समझते हो वा अभगद्वार खुले हैं।

३३–असाता वेदनीयको दवाईसे नहीं किन्तु सत्य आत्म भावना शुभ-कर्तव्यसे क्षय कीजियेगा।

३४–सदा आत्म-जागृति रखियेगा।

३५–आपको समझना बहुत बाकी है पुन्याइको सार्थक करो।

३६–भाइ श्री से यहांके टेकेदारकी द्रव्यभाव जागृति समझियेगा और स्व आत्माका निरीक्षण कीजियेगा।

सुमति व शान्तिदायी मुद्रालेस दृष्टिमें रखियेगा।

देशावर जानेवाले भाईके प्रति सन्देश।

प्रियवर !

१–इरादा पूर्वक पवित्र वातावरणको छोड़कर अपवित्र वातावरणमें जारहे हैं।

२–संतपुरुषोंके समागमको छोड़ करके स्वार्थी पुरुषोंके समूहमें जारहे हो।

३–सन्तसे स्वार्थीके परमाणु अनन्तगुणे खराब होते हैं।

४–जैसे आप इरादा पूर्वक अपवित्र वातावरणमें जारहे हैं, वैसही आप अनादिकालसे इरादा पूवक अपवित्र कार्य कर रहे हैं।

५–अनार्य भूमिसे अनार्य कार्य विशेष भयङ्कर हैं।

६–अनार्य क्षेत्रमें भी आर्य कार्य हो सकते हैं।

७–अनार्य कार्यवालोंका तो अवश्य नरक निगोदादि स्थान, जो अनार्यभूमिसे भी अनन्त कम पुन्याईमय स्थान हैं, वहाँ उत्पन्न होना पड़ता है।

८–क्रोध, मान, माया, लोभ, शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्श, असत्य आदिमें आसक्ति भाव अनार्यता है। यह सब अनार्योंका जाति स्वभाव है।

९–अक्रोध (क्षमा), निरभिमान (विनय), निष्कपटता (सरलता–स्पष्टता), निर्लोभता (सन्तोष), शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्श आदिमें वैराग्य, ये सब भाव कर्तव्य हैं।

१०–अनार्य भूमि, अनार्य वेष और अनार्य भाषासे भी अनार्य प्रकृति अनन्त भयंकर है।

११–अनार्य मनुष्यकी प्रकृति अनार्य होती है। अन्य सब दुर्गुण उसमें प्रवश करते हैं।

१२–अनार्य स्थानमें जाकर प्रकृति और मनको आर्य रखनसे ही अपना आर्यत्व कायम रह सकता है। अन्यथा अनार्य स्थानमें जाकर ही अनार्य मन जाना पड़ता है और फिर उसे उसके फल स्वरूप वैसीही अधम गतिके अधिकारी बनना पड़ता है।

१३–पांच सामायिकमें यथा अवसर पाँच विभाग कीजियेगा।

१–दोहे, २–गाथा — नवीन कंठस्थ करना।

३–दोहे पुनरावर्तन }
४–गाथा पुनरावर्तन } ध्यानमें

५–ध्यान वचनामृत लेखन

निरन्तर रटन (अजपाजाप) "सोऽहं"

केवलणाण सहावो, केवल दसणसहाव सुहमइओ।
केवल सत्ती सहाओ, 'सोऽहं' इदि चिंतए णाणी ॥१॥

भावार्थ—मैं केवल ज्ञान स्वरूप हूं, केवल दर्शन स्वरूप हूं, अनन्त सुखमय हूं, अनन्त शक्ति सम्पन्न हूं, इन चार गुणोंका पुंजरूप मैं हूं यह "सोऽहं" का अर्थ है।

जेलवासीके प्रति आत्मोपयोगी सन्देश ।

(अपने पुराने अपराधोंकी शुद्धि करनेकेलिये देशसेवाके पवित्र कार्यको करके जेलमें जानेवाले एक भाईको भेजे गये वचनामृत ।)

१–बाबूजी किसका नाम है ? (इस शरीरका)

२–इस देहका नाम बाबूजी है तो इसमें रहे हुए पदार्थका क्या नाम है ? (देहसे भिन्न इसमें रहा हुआ जीव है वह ज्ञान स्वरूप आत्मा है ।)

३–यदि यह देहसे भिन्न पदार्थ है तो कहाँ रहता है ? (यह आत्मदेव सारे शरीरमें व्यापक है ।)

४–देहका क्या धर्म है और आत्माका क्या धर्म है ? (देहका धर्म—वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, उत्पत्ति और विनाश, और आत्माका धर्म ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य और अविनाशीपन है ।)

५–कौन मरता है ? क्यों मरता है ? कैसे मरता है ? कौन मारता है ? इसका विचार करो। (जीवने शरीरकी ममताकी, जिससे आयुष्य कर्म बांधा उसके पूर्ण होनेसे पांच इन्द्रिय, तीन बल, श्वासो च्छ्वास और आयु, इन दश प्राणोंका वियोग होना सो मरना है। इसे ही जीव ममतासे मृत्यु मानता है। मोही जीव इच्छा, वांछा या दुःखमें और निर्मोही समदृष्टि जीव समता, शान्ति और आत्मध्यानमें मरता है। वास्तवमें मारनेवाला और कोई नहीं है। यह जीव ही ममतावश रागद्वेष करके जन्म-मरण करनेवाले कर्म बाँधता है। इसलिए आप ही आपका घातक है।)

६–मरनेके बाद शरीरका क्या होगा ? (मिट्टीमें मिल जायगा)

७–शरीरमें से कौन चला जाता है ? और कहाँ चला जाता है ? (आत्मा चला जाता है और अपने कर्मोंके अनुसार गतिमें चला जाता है ।)

८–क्या यह शरीर यहांपर छोड़ जाना होगा ? (शरीर और वैभव निश्चयसे छोड़कर जाना होगा ।)

९–क्या यह सुन्दर देह जला दी जायेगी ? क्यों ! और कौन जलावेंगे ? (अवश्य यह काया नष्ट होगी। इसका स्वभाव ही ऐसा है । तीर्थंकर और चक्रवर्तीके शरीर भी जलाये जाते हैं । और जिन लोगोंको इसने पाला-पोषा है, वे कुटुम्बी लोग ही इसे जल्दीसे जल्दी जलावेंगे ।

१०–अहो ! शरीरका यह धर्म है तो आत्माका क्या धर्म है ?

११–क्या आत्माको पहिचानते हो ? उसकेलिये कभी चिन्ता की ? (नहीं पहिचानते, अन्यथा जीवन बदल जाता । और उसके पहिचाननेकी कभी चिन्ता भी नहीं की ।)

१२–शरीरकेलिए कितना खर्च किया ? और आत्माकेलिए कितना ? (मन भर शरीरकेलिए और सेर भर आत्माकेलिए ।)

१३–शरीरकी चिन्ता कितनी करते हो ? और आत्माकी कितनी ? (शरीरकी चिन्ता चौबीस घण्टा, आत्माकी चौबीस मिनिट, सो भी बराबर नहीं ।)

१४–आत्मा कब जायेगा ? और क्या ले जावेगा ? (आयु पूर्ण

होवे ही जावेगा और कर्मानुसार गतिमें जावेगा। रागद्वेषका नाश नहीं करनेसे चारों गतिमें जावेगा। साथ पुण्य पाप से जावेगा।)

१५-वर्तमानमें शरीरकी चिन्ता है या आत्मा की? (शरीर की चिन्ता मुख्य है।)

१६-शरीरको सुखी बनानेका कौनसा उपाय है? (भोग, त्याग, संयम, सादगी और प्राकृतिक जीवन शरीर सुखके कारण हैं तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, ध्यान और मौन आदि आत्माको सुखी बनानेके कारण हैं।)

१७-आत्मधर्म सत्य है कि शरीरधर्म?

१८-आजतक आत्माकेलिये क्या किया? और क्या करना चाहते हो?

१९-आजतक शरीरकेलिये क्या किया? और क्या करना चाहते हो?

२०-शरीर क्या है? और आत्मा क्या है? (शरीर जड़ है, आत्मा चैतन्य-ज्ञान और सुखसे पूर्ण है।)

२१-शरीरका धर्म क्या है, और आत्माका धर्म क्या है?

२२-दोनोंमें विनाशी या अविनाशी कौन है? (शरीर विनाशी और आत्मा अविनाशी है।)

२३-मैं कौन हूं, कहांसे आया, कहां आया, क्यों आया? (मैं ज्ञान स्वरूप आत्मा हूं, पूर्वमें सत्य, विनय, दयालुता और गुण-ग्राहकताकी खूब आराधना किसी गतिमें करके इस मनुष्य देहमें आया हूं।)

२४–क्या करना चाहिये और क्या कर रहा हूँ ? (आत्म साधन करना चाहिए और भोग–साधन कर रहा हूँ ।)

२५–जीवको भ्रमण करते कितना समय हुआ ? (अनन्तकाल)

२६–क्या जीवकी आदि अन्त है ? (नहीं ।)

२७–इतने काल तक जीव कहां था, और कैसा था ? (चारों गतिमें भटक रहा है, और अनादिसे रागी, द्वेषी, मोही, प्रमादी और अज्ञानी होनेसे देहधारी है ।)

२८–अब जीव कहां रहेगा, और कैसे रहेगा ? (मोही रहा तो चारों गतिमें रहेगा और निर्मोही बना तो मोक्षमें ।)

२९–शरीरके काम कौनसे और आत्माके काम कौनसे हैं ? (आहार, निहार, विहार, निद्रा आदि शारीरिक कार्य हैं, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, ध्यान आदि आत्माके कार्य हैं ।)

३०–शरीर और आत्माका सम्बन्ध कैसे है, और कहां तक रहेगा ? (अनादिसे है और जहां तक ममताका सर्वथा नाश न हो, वहां तक रहेगा ।)

३१–शरीर और आत्माका सम्बन्ध कब हुआ और कब छूटेगा ? (अनादिसे सम्बन्ध है और ममताका नाश करनेसे वह छूटेगा ।)

३२–शरीर और आत्माका सम्बन्ध रहनेसे आजतक क्या हुआ, और क्या होगा ? (जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, भय और दुःख हुआ और होगा, ममता त्यागकर समताधाम बननेसे अशरीरी (सिद्ध) बनेंगे ।)

३३-शरीर और आत्माका सम्बन्ध छूट सकता है या नहीं? (अवश्य।)

३४-शरीर और आत्माका सम्बन्ध न छूटनेसे क्या होगा? (सदाकेलिए दुःख)

३५-शरीर और आत्माका सम्बन्ध कैसे छूटेगा? (ज्ञान, समकित, चारित्र, तप, ध्यानसे छूट सकता है।)

३६-शरीर और आत्माका सम्बन्ध कैसे छूट सकता है? क्या इसका विचार किया?

३७-शरीर और आत्माका सम्बन्ध अग्निकी उष्णता जैसा है या तलवार और म्यान जैसा है? (तलवार और म्यान जैसा।)

३८-आज तक आत्माने शरीरको बन्धन-रूप समझा है या सुखरूप? (मोहसे सुखरूप।)

३९-आज तक आत्माके ऊपर शरीरका बन्धन बढ़ाया या घटाया?

४०-नित्य-प्रति शरीरका आत्मासे सम्बन्ध छूटे वैसा प्रयत्न करते हो या ज्यादा बँधे ऐसा?

४१-शरीरसे छूटनेका कौनसा उपाय और बँधानेका कौनसा उपाय? विचारो। (वैराग्य छूटनेका, सराग बंधनेका)

४२-शरीर और आत्माके कार्य विचार कर आत्म-धर्मकेलिये शीघ्रता करो।

४३-आज तक संसारके ही कार्य किये।

४४-शरीर, कुटुम्ब, जाति, ग्राम, प्रान्त और देशसेवा, यह सब संसारी कार्य हैं। (स्वार्थका भरा हो तो अशुभ है, निस्वार्थ हो तो शुभ है)

४५-ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और ध्यान, यह निज आत्माका कार्य है और अविनाशी सुख देनेवाला है। (निस्वार्थ शुभ कार्य आत्म कल्याणमें सहायक है)

४६-हिंसा, विषय और कषायको सिंह, सर्प और अग्नि समान समझो।

४७-हँसराज! पींजरेमें से निकलनेके बाद क्या करोगे?

४८-आज ही मृत्यु आजाये तो कौनसी गति मिले?

४९-प्रभु महावीरके ज्ञानका क्या लाभ उठाया?

५०-क्या मरनेका विश्वास है?

५१-आज तक मरनेकी तैयारी की या जीनेकी?

५२-अब मरनेकी तैयारी करोगे या जीनेकी?

५३-कितना आयुष्य चला गया और कितना बाकी है?

५४-पुण्य पापको मानते हो या नहीं? (मानते हो तो पाप क्यों करते हो।)

५५-स्वर्ग, नरक, आस्रव, संवर, बन्ध और मोक्षको मानते हो या नहीं?

५६-स्वर्ग और नरकको मानकर क्या किया?

५७-दूसरेके जीवनमें और आपके जीवनमें क्या भिन्नता है?

५८-आजतक पवित्र धर्मके कार्य कितने किये?

५९-आजतक पापके कार्य कितने किये?

६०–पापके कार्यमें कौनसी गति और पुण्यके कार्यसे कौनसी गति होती है ?

६१–प्रभु महावीरके वचनपर क्या विश्वास है ? (विश्वास हो तो बराबर क्यों नहीं चलते ?)

६२–सुखको समझते हो, सुख कहां है, कैसे मिले ? (सुख आत्मामें ही है और विषय विकारोंके नाश होनेसे प्रकट होता है।)

६३–दुःखको समझते हो, दुःख कहां है ? कैसे मिले ? (दुःख मोहसे होता है।)

६४–दुःख और सुखका मूल क्या है ? (अज्ञान और ज्ञान।)

६५–संसारमें इतनी विचित्रता क्यों ? (कर्तव्योंकी भिन्नता होनेसे।)

६६–एक सुखी और एक दुःखी क्यों ? (शुभ कामोंसे सुखी और अशुभ कामोंसे दुःखी।)

६७–एक पालखीमें बैठता है और उसको अनेक क्यों उठाते हैं ? (जो स्वार्थी थे उन्हें भार उठाना पड़ता है।)

६८–एक माताके पेटमेंसे जन्मे हुए दो भाईमेंसे एक मोतीका हार पहिनता है तब दूसरेकी आंखमेंसे मोती जैसे आंसू गिरते हैं (जिसने मोती परोपकारमें दिये उसे मोती मिले हैं और मोतीकी ममताकी, उसके मोती जैसे आंसू पड़ते हैं।)

६९–एक लाखोंपर शासन करता है, तब दूसरा लाखोंकी खुशामद करता है। (लाखोंकी सेवा करनेवाला उनका शासक बनता है लाखोंको दुःख देनेवाला लाखोंकी खुशामद करता है।)

४४–शरीर, कुटुम्ब, जाति, ग्राम, प्रान्त और देशसेवा, यह सब संसारी कार्य हैं। (स्वार्थका अंश हो तो अशुभ है, निःस्वार्थ हो तो शुभ है)

४५–ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और ध्यान, यह निज आत्माका कार्य है और अविनाशी सुख देनेवाला है। (निःस्वार्थ शुभ कार्य आत्म कल्याणमें सहायक है)

४६–हिंसा, विषय और कषायको सिंह, सर्प और अग्नि समान समझो।

४७–हँसराज ! पींजरेमें से निकलनेके बाद क्या करोगे ?

४८–आज ही मृत्यु आजावे तो कौनसी गति मिले ?

४९–प्रभु महावीरके ज्ञानका क्या लाभ उठाया ?

५०–क्या मरनेका विश्वास है ?

५१–आज तक मरनेकी तैयारी की या जीनेकी ?

५२–अब मरनेकी तैयारी करोगे या जीनेकी ?

५३–कितना आयुष्य चला गया और कितना बाकी है ?

५४–पुण्य पापको मानते हो या नहीं ? (मानते हो तो पाप क्यों करते हो।)

५५–स्वर्ग, नरक, आस्रव, संवर, बन्ध और मोक्षको मानते हो या नहीं ?

५६–स्वर्ग और नरकको मानकर क्या किया ?

५७–दूसरेके जीवनमें और आपके जीवनमें क्या भिन्नता है ?

५८–आजतक पवित्र धर्मके कार्य कितने किये ?

५९–आजतक पापके कार्य कितने किये ?

६०–पापके कार्यमे कौनसी गति और पुण्यके कार्यसे कौनसी गति होती है ?

६१–प्रभु महावीरके वचनपर क्या विश्वास है ? (विश्वास हो तो बराबर क्यों नहीं चलते ?)

६२–सुखको समझते हो, सुख कहां है, कैसे मिले ? (सुख आत्मामें ही है और विषय विकारोंके नाश होनेसे प्रकट होता है।)

६३–दुःखको समझते हो, दुःख कहां है ? कैसे मिले ? (दुःख मोहसे होता है।)

६४–दुःख और सुखका मूल क्या है ? (अज्ञान और ज्ञान।)

६५–संसारमें इतनी विचित्रता क्यों ? (कर्त्तव्योंकी भिन्नता होनेसे।)

६६–एक सुखी और एक दुःखी क्यों ? (शुभ कामोंसे सुखी और अशुभ कामोंसे दुःखी।)

६७–एक पालखीमें बैठता है और उसको अनेक क्यों उठाते हैं ? (जो स्वार्थी थे उन्हें भार उठाना पड़ता है।)

६८–एक माताके पेटमेंसे जन्मे हुए दो भाईमेंसे एक मोतीका हार पहिनता है तब दूसरेकी आंखमेंसे मोती जैसे आंसू गिरते हैं (जिसने मोती परोपकारमें दिये उसे मोती मिले हैं और मोतीकी ममताकी, उसके मोती जैसे आंसू बहते हैं।)

६९–एक लाखोंपर शासन करता है, तब दूसरा लाखोंकी खुशामद करता है। (लाखोंकी सेवा करनेवाला उनका शासक बनता है लाखोंको दुःख देनेवाला लाखोंकी खुशामद करता है।)

७०—एक घर-घर भीख मांगता फिरता है तब दूसरेको परूरसे लाखों गुणा साधन मिला हुआ है। (जिसने बहुत दिया उसे बहुत मिला, जिसने नहीं दिया वह अब भीख मांगता फिरता है।)

७१—करोड़पति पुत्रहीन है और कंगाल पुत्रोंके खर्चसे मर रहा है।

७२—एकको खमा २ होती है तब दूसरेको फटकार (जिसने भले काम पहिले बहुत किये, उसे आज बिना कारण खमा २ होती है और जिसने पहिले बुरे काम किये, उसे निष्कारण आज फटकार मिलती है।)

७३—एक कुत्ता मोटरमें आनन्द करता है तब दूसरा भटकता फिरता है। (कपटाईसे कमाकर दान देनेवाला सुखी कुत्ता हुआ, और कपटाईसे कमाकर मौज करनेवाला दुःखी कुत्ता हुआ है।)

७४—यह गाय, भैंस, घोड़े, गधे, बैल, कुत्ते आदि क्यों कैसे बने ? (कपट, झूठ, विलास व प्रमादसे)

७५—आप मनुष्य और सम्पत्तिशाली कैसे बने ? (सत्य, विनय, दया और सद्गुणग्रहणसे।)

७६—आपके शरीरमें रोग क्यों आता है ? (देहका सदुपयोग नहीं किया जिससे।)

७७—जैसा शरीर सुन्दर है उतनी मनकी जोगवाई क्यों नहीं ? (देहसे थोड़ी सेवा की, पर मनसे नहीं की।)

७८—मूर्ख करोड़ाधिपति और विद्वान् कंगाल क्यों ? (बहुत दानसे धनी और दानकी कमी होनेपर भी विद्याका प्रेम होनेसे निर्धन विद्वान् होते हैं।)

७६–एकको रहनेकेलिए महल और पलंग, तब दूसरेको सड़क पर भी स्थान नहीं (जिसने कष्ट सहे, उसे महल और पलंग जिसने कष्ट दिये, उसे सड़क व डंडे ।)

८०–यह सब विचित्रता क्यों है ? इसका विचार करो (कर्तव्यानुसार विचित्रता है ।)

८१–आत्मा है, कर्म है, कर्मके फल भुगतने पड़ेंगे।

८२–किये हुए कर्मके फल बिना भुगते नहीं छूटते (छूटने दो उपाय हैं—चारित्र, तप व ध्यानसे बिना फल दिये ही कर्म न होते हैं जो ये उपाय नहीं करते उन्हें भोगने पड़ते हैं।)

८३–प्रभु महावीरको भी देव और मानवोंने कष्ट दिया था।

८४–गजसुकुमालजीको मोक्ष जानेके पहिले अन्तर्मुहूर्त त शिरपर खैरका सीरा रखाना पड़ा । यों सब महापुरुषोंको भुगतने पड़े हैं। बिना कष्ट भुगते कोई महा पुरुष नहीं हुआ।

कैद ।

१–आत्मा सदा कैद या स्वतन्त्र है? जैसे सोना अन्य धातुओंमें मिलता है, फिर भी स्वतन्त्र गुण नष्ट नहीं करता। उपायोंसे शुद्ध हो सकता है। इस प्रकार आत्मा आज सशरीरी, रागी, द्वेषी दीखता है, परन्तु उपायोंसे परमात्मा तुल्य बन सकता है। इस आशय—निश्चय नयसे आत्मा स्वतन्त्र है, शुद्ध है, बुद्ध है।

२–इसको कोई भी क़ैद नहीं कर सकता।

३–व्यवहारसे चार क़ैद हैं। राजक़ैद (देवगति) सादी क़ैद (मनुष्य गति) सख्त क़ैद (तिर्यञ्च गति) और कालापानी (नरक गति स्थावर निगोद) हैं।

४–मोक्षके जीव स्वतन्त्र हैं। उन्हें शरीरादि कोई बन्धन नहीं है। (वेही सच्चे स्वराज्यके भोक्ता हैं।)

५–राजनैतिक अपराधसे पूर्ण बाह्य आरामोंके साथ राजक़ैदकी सजा होती है, इसी प्रकार आत्मधर्म छोड़कर जो शुभ राग–दान पुण्यमें ही सर्वस्व मान सर्वस्व त्यागते हैं, वे स्वर्गमें क़ैद हो जाते हैं। दीवानीके अपराधीको सादी क़ैद होती है, उसकी आवश्यकतायें पूरी की जाती हैं। इसी प्रकार उत्कृष्ट दान—त्यागरूप देना न चुकाना, परन्तु सत्यवादी, सरल व अमुक दानादि करनेवाला मनुष्य होता है। झूठ कपटवाले तिर्यञ्च व महा आरम्भी–महापरिग्रही–शराब–मांसभक्षी, तृष्णावान् भोगी, गरीबोंको चूसनेवाला, ईर्षा,

द्वेष और कलह प्रेमी, मान बड़ाईमें मस्त, आत्मधर्म व परोपकार करते हुए भी अपने माह्य स्वार्थ रक्षादिके कारण सेवन करनेवाले ऊपरसे उत्तम अन्दर मलीन भाववाले नरकमें जाते हैं। वहांसे निगोदमें अनन्त काल तक भटकते हैं।

६–इस जन्मकी और परजन्मकी क़ैदसे छूटना अपना ध्येय होना चाहिये।

७–यहांकी क़ैद बरसों तक और परलोककी क़ैद अनन्त काल तक की है।

८–सरल क़ैदवाला जैसे हाथ पैरकी बेड़ीको बन्धन मानता है और उसके छुटकारेकी भावना रखता है, वैसे ही ज्ञानी मानव-शरीरको हाड़ मांस लोहूकी बनी हुई बेड़ी मानता है और उससे लज्जा पाता है। और अशरीरी होनेकी भावना भाता है। जैसे—गजसुकुमालजी।

९–आत्मा जहां तक मोक्षमें न जावे वहां तक क़ैद है।

१०–आत्मा सदा स्वतन्त्र है। मानुषी तो क्या दैवी शक्ति भी प्रबल नहीं है कि जो आत्माको क़ैद कर सके (आत्मा स्वयं ही—देह ममता व राग द्वेषसे क़ैदी बनता है।)

११–चाहे जैसे अनिष्ट संयोगोंमें भी आत्मा अपना आत्मकार्य कर सकता है। उसमें अनन्त इन्द्र भी विघ्न नहीं कर सकते।

१२–आत्मकार्यमें विघ्न करनेकी शक्ति एक क्या अनेक देवमें भी नहीं है।

१३–आपको बन्धन नहीं हैं, आप सदा स्वतन्त्र हैं। कमरीसिंह की कच्चे सूतका बहुत बारीक बन्धन क्या कर सकता है ?

१४–सबसे ज्यादा बज्रमय बेड़ियोंका बन्धन शरीर और कर्म (राग द्वेष मोह रूप भाव कर्म) का है।

१५–इस क्षुद्र नादान तुच्छ पामर अधम दुर्बल बन्धनसे मुक्त होनेके बाद जिस अनन्त बन्धनको तोड़नेकेलिए अनन्तकालमें यह सुनहरी अवसर मिला है, उस बन्धनको तोड़नेकी पूर्ण कोशिश कीजियेगा। वर्तमानमें भी आत्मस्वरूप विचारसे रहियेगा। आपकेलिये यह अपूर्व अवसर एकान्त चिन्तन करनेका मिला है। ऐसे अवसर बड़े-बड़े धर्माचार्योंको भी नहीं मिले हैं। उनका जीवन सम्प्रदाय शिष्य और श्रावकसमूहकी रक्षामें जाता रहा है। और वे अपनी प्रायः आत्मरक्षा भूल जाते हैं। आपको तो एकान्तका सुन्दर अवसर है सो आराधना कीजियेगा और लाभ लीजियेगा।

भव्य आत्माओंके प्रति संदेश--

१-पवित्र आत्मन ! आपकी आदि विचारिएगा।

२-मानव भवकी दुर्लभता विचारिएगा।

३-दश बोलकी दुर्लभता विचारिएगा।

४-पूर्वमें वर्तमान संयोगके लिये कितनी आराधना की होगी।

५-पूर्वमें कितनी घोरातिघोर तपश्चर्या की होगी ?

६-दस बोलमें से एक एक बोलके लिये अनन्त जन्म तक तीव्रातितीव्र कष्ट सहन किया होगा।

७-एकएक बोलकी अमूल्यता विचारिएगा।

८-पांच इन्द्रियकी बहुमूल्यता विचारिएगा।

९-प्रत्येक इन्द्रियका सदुपयोग विचारिएगा।

१०-मानव देह मिलनेसे क्या विशेषता हुई ?

११-आर्य क्षेत्रमें जन्म लेकर कैसे काय किये ?

१२-अनार्य कार्य कौनसे और आर्य कार्य कौनसे हैं ?

१३-आप कौनस कार्य कर रहे हैं ?

१४-विषय कषायकी प्रवृत्ति आर्य है कि अनार्य ?

१५-कितना जीना और बाकी है ?

१६-कितनी उपाधि कर रहे हो ?

१७-मकड़ी क्यों जाल बिछाती है ?

१८-मक्खी शहद क्यों जमा करती है ?

१९-कीड़ी कण क्यों जमा करती है ?

२०-मकोड़े कण क्यों जमा करते हैं।

२१-चूहा बिल क्यों बनाता है?

२२-पक्षी घोंसला क्यों बनाता है?

२३-उनको तो यमराजका भय नहीं है क्योंकि उनको उन्हें ज्ञान ही नहीं है।

२४-आपको तो सब ज्ञान है। तब आपको क्या करना चाहिये?

२५-मरना मानते हो या नहीं?

२६-मरनेकी क्या तैयारी की है?

२७-जीनेकी सामग्री [जो तुम जमा कर रहे हो सो तुम्हें कितना जीना है?

२८-इस सामग्रीका क्या होगा?

२९-यह सामग्री कितने दिनकी है?

३०-अब यहांसे कहां पधारना होगा?

३१-देव और मनुष्यगति अनन्त दुर्लभ है।

३२-नरक तिर्यञ्चगति अनन्त सुलभ है।

३३-गडूरेकी दृष्टि विष्टामें ही गिरती है।

३४-गधेको यदि स्नान करावें तो भी वह दुर्गन्ध राखमें लोटता है।

३५-मक्खी सड़ी चमड़ीपर बैठती है।

३६-जैसा पात्र होगा, वैसी ही उसको रुचि होगी।

३७-विषया जीव महापामर है।

३८–पामर अपनेको प्रभु मानता है।

३९–प्रभुताके कार्यको पामर समझते हैं।

४०–संसारिओंकी दशा अनन्त विपरीत है।

४१–अरे ! कोई प्राणी ! मानवभवका मूल्य समझो।

४२–मानवभवके मूल्यको असंख्य नारकी और असंख्य देव अच्छी तरहसे समझते हैं।

४३–सब मनुष्य मानवदेहका कुछ भी मूल्य नहीं समझता।

४४–मानवको मिट्टीके घड़े जितना भी मानव देहकी चिन्ता नहीं है। वह तो उन्माद (मोह) दशामें मस्त है।

४५–अनन्त पुण्यशालीका जीवन सफल है।

४६–अनन्त पुण्यहीनका जीवन असफल है।

कितने समयकेलिये ?

१-बेटा बेटीका ब्याह क्यों करते हो ?
२-ब्याह करनेसे क्या फ़ायदा ?
३-न करते तो क्या नुकसान ?
४-यह ब्याह सम्बन्ध कितने वर्षोंका है ?
५-इतन अल्प आयुकेलिये यह कितनी भारी उपाधि है !
६-देशान्तर क्यों जारहे हो ?
७-व्यापार या नौकरी क्यों करते हो ?
८-कितने समयकेलिये यहां रहना चाहते हो ?
९-यहांसे कब रवाना होओगे ?
१०-क्या सौ वर्षके बाद मरनेका विश्वास है ?
११-अगर हो तो शेष वर्ष कैसे बिताने चाहिये ?
१२-मकान धन आदि कितना एकत्र करते हो ?
१३-मकानकी नींव कितनी ओंडी लगाते हो ?
१४-धन कितना जमा करते हो ?
१५-अल्प आयुकेलिये कितना साधन जरूरी है ?
१६-इतने साधन कितने वरसोंकी तैयारी है ?
१७-क्या साधन जितने वर्ष जीओगे ?
१८-फिर इतनी उपाधि क्या ?
१९-आयु नित्य घट रही है, यह समझकर उपाधि घटानी चाहिए या बढ़ानी चाहिए ?

२०-आप क्या कर रहे हो ?

२१-हमको तो नवीन पढ़ना और लिखना भी परिग्रह मालूम होता है (ध्यानदशा निवृत्तिकी उच्चकोटि है ।)

२२-धन, स्त्री, पुत्रादि सम्पत्ति कभी कष्टरूप अनुभव हुए ? नहीं हुए तो क्यों ? (जैसे, सर्पका विष चढ़े हुए मनुष्यको कडुआ नीम भी मीठा लगता है, इसी प्रकार मोहान्ध जीवको एकान्त अहितकारी विषय, कषाय, प्रमाद भी सुखदायी दीखते हैं । जब सत्यज्ञान व वैराग्य होता है तब जहर उतरे मनुष्यको जैसे नीमादि कडुआ अनुभव होते हैं वैसे विषय कषाय प्रमादमें वह अनन्त दुःख अनुभवता है और जागते तो क्या नींदमें भी उनको सेवन नहीं करता ।

२३-नास्तिक नवीन व्यापार, नवीन मकान, नवीन लग्न, नवीन धनसंग्रह सन्तानका लग्न कर सकता है ? (जिसे आत्म-स्वरूपका निश्चयरूप आस्तिकता-अनुभव प्रकट है वह आत्मघातक प्रवृत्तियोंको छोड़ता है । कभी कोई करे तो मरे हुए पुत्रकी अग्नि-दाह क्रियाके समान पश्चात्ताप करता हुआ करता है, जिससे उसको थोड़े रूपसे कर्म बँधते हैं, वह शीघ्र नाश होते हैं ।)

२४-आस्तिककी प्रवृत्ति कैसी चाहिये ? (समभाव सहित)

२५-आप दोनोंमेंसे कौन हैं ?

२६-नास्तिककी प्रवृत्ति कैसी चाहिये ? (रागद्वेष सहित)

२७-जगतमें किसने महल बनाया ?

२८-जगतमें किसने दुकान खोली ?

१९–जंगलमें किसने अपना घन रखा ?

२०–मुसाफिरखानामें क्या किसने फोटू लगवाया ?

२१–मुसाफिरखानामें क्या किसीने रंगाइ पोताई की ?

२२–मुसाफिरखानामें, जंगलमें, और इस मानव संसार क्या अन्तर है ?

२३–आपको कौनसी उपमा दी जाय ? (इस उपमाके लि असख्य वर्ष तक विचार करूं किन्तु न तो कोई शब्द उपमा व कल्पना दृष्टान्त हेतु मिलता है कि जिससे आपकी अज्ञानता मूल जड़ताका मुकाबला कर सकू ।)

२४–सातवें नरकके असंख्य नारकियोंसे भी अगर जो को पामर है तो केवल एक मनुष्य कि जो ऐसे उत्तम अवसर गुमाता है ।

२५–आत्म जागृतिसे रहित जीवनवाला चाहे वह साधु हो व गृहस्थ हो अनन्त तिर्यंच असंख्य नारकी असंख्य देवसे भी अनंत पामर है ।

समभाव ।

१-समभाव आत्माका निजस्वभाव अर्थात् शुद्ध स्वभाव है ।

२-विषमभाव यह परस्वभाव अर्थात् अशुद्ध स्वभाव है ।

३-समभाव आत्माका गुण है ।

४-विषमभाव पुद्गलसंयोगका गुण है ।

५-आत्मज्ञानी तो कभी विषमभावमें नहीं जाता ।

६-पुद्गलमय आत्मा समभावका अनुभव नहीं कर सकता ।

७-समदृष्टि समभावी और मिथ्यादृष्टि विषमभावी है ।

८-समदृष्टि भव्यका समभाव स्वभाव है ।

९-मिथ्यादृष्टि अभव्यका विषमभाव स्वभाव है ।

१०-समभावी नेत्रोंवाला है और वही आत्मा है ।

११-समभावसे रहित जड़ समान है ।

१२-आत्माका विश्वास हो तो समभाव स्थिर रहता है ।

१३-आत्मज्ञानका अभाव विषमताम रहता है ।

१४-समभाव सिद्धिका दाता है ।

१५-विषमभाव संसारका बढ़ानेवाला है ।

१६-जैसे अग्निका स्वभाव उष्ण है, अग्निमें उष्णता दूर नहीं हो सकती, वैसे ज्ञानीसे समभाव दूर नहीं हो सकता है ।

१७-समदृष्टि मोक्षका अभिलाषी, कभी भी स्वप्नमें भी या भूलमें भी विषमभावको अपने पास नहीं आने देता ।

१८-जैसे सिंहसे हिरण भागते हैं वैसे समदृष्टिसे विषमभाव भागता है ।

क्षमा ।

१–क्षमा आत्माका निज गुण है।

२–क्रोध महाविष है।

३–सर्प, विच्छू, अफीम और सोमलके विषसे घबड़ानेवाला क्रोध रूपी विषका पान नहीं कर सकता।

४–क्रोध क्रोड़ पूर्वकी तपश्चर्याकोभी क्षणमें नष्ट कर देता है।

५–क्रोध मोक्षमें जानेवालोंको सीधा नरकमें ले आता है।

६–प्रसन्नचन्द्र राजर्षि जिनको ४८ मिनिट बाद केवलज्ञान होने वाला था उनको क्रोधके मानसिक परिणामोंने सातवें नरकका अधिकारी बतलाया और उसके हटजानेसे उसी क्षण केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

७–४९९ शिष्योंकेलिये क्षमा की किन्तु एककेलिये कषाय करने से श्रीस्कन्धकजी मुनि बाजी हार गये।

८–आचार्य भी कि जो इन्द्र होनेवाले थे, क्रोधसे मर कर "चण्डकौशिक" सर्प बने।

९–दो द्रव्य जड़ और चेतनके संयोगसे क्रोध उत्पन्न होता है।

१०–आत्मा स्वयं शुद्ध दशामें क्रोध नहीं करता।

११–क्रोध करना आत्माका निज स्वभाव नहीं है; यदि होता तो अग्नि जैसी कषायकी उष्णता आत्मामें बनी रहती।

१२–क्षमा रखना सरल है—क्रोध करना मुश्किल है। (क्रोधी स्वयं दुःख पाता है औरोंको दुःख देता है। इस लोकमें क्रोधी भाव

नारका पैदा करता है इससे क्रोध करना मुश्किल है, जब क्षमावान खुद आनन्दमें रहता है।

१३-अभ्यास करनेसे क्रोधके भाव भूल सकते हैं।

१४-क्षमावान् खुद आनन्दमें रहता है औरोंको आनन्द रखता है तथा इस लोकमें स्वर्ग और मोक्षके सुखका अनुभव भावोंमें करता है इसलिए क्षमा करना सरल है।

(क्षमा वान के आस पास का वातावरण शांति मय बनता है सिंह और सर्प भी अपना स्वभाव छोड़कर अहिंसात्मक बनते हैं दुश्मन मित्र बनते हैं। प्रेमसे द्वेष नष्ट होता है आज महात्मा गांधीजी इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। ——सं० चेतन)

घनघाती और अघाती कर्म।

१-आठ कर्ममें चार घनघाती हैं और चार अघाती हैं।

२-घनघातियेका अर्थ जो आत्माके निज गुणका घात करे (ज्ञान, दर्शन, सुख और शक्तिको घाते)

३-अघातिये कर्म आत्माके निजगुणका घात नहीं कर सकते

४-घनघातिये कर्म आत्माके निज गुणको घात करते हैं (ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय, ये चार हैं

५-अघातिये कर्म शरीरके गुणोंका घात करते हैं (वेदनीय आयुष्य, गोत्र और नामकर्म, ये चार हैं।)

६-घनघातिये कर्मोंका सम्बन्ध आत्मासे है।

७-अघातिये कर्मोंका सम्बन्ध शरीरसे विशेष और आत्मासे अल्प है।

८-शरीरसे आत्मा अनन्त कीमती है।

९-इसलिये घनघातिये कर्म अघातिये कर्मसे अनन्तबली माने गये हैं।

१०-जिसको शरीरका बोध है वह अघातिये कर्मकी चिन्ता और उपायकी मिथ्या कोशिश करता है।

११-जिसको आत्माका ज्ञान है वह घनघातिये कर्मको नाश करनेकेलिये उपाय करता है-पुरुषार्थ सेवता है।

१२-आत्मा और शरीर क्या है?

१३-आत्मा स्ववस्तु है।

१४–शरीर परवस्तु है।

१५–स्ववस्तुपर अधिकार जमाना सरल है।

१६–परवस्तुपर अधिकार जमाना मुश्किल है।

१७–घनघातिये कर्म पवित्र भावनासे क्षय हो सकते हैं।

१८–अघातिये कर्म परवस्तु शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाले हैं। इसलिये यह पूरे द्वेषके साथ बर्ताव करते हैं अंशमात्र दया लज्जा शरम सिफारिश भावना प्रार्थनाको न सुनते हुए अपना फर्ज अदा करते हैं।

१९–तब घनघातिये कर्म जो आत्माका घात करनेवाले है वे तो बेचारे थोड़ी भावना मात्रमें किसी प्रकारका दुःख दिये बिना ही नष्ट हो जाते हैं।

२०–इसके फल स्वरूप केवलज्ञान होनेपर भी प्रभु महावीरको चार कर्म बाकी रहे थे जिसके फल स्वरूप गोशालने प्रभुको तेजो लेश्या डाली। प्रभुको लोही ठाणका रोग हुआ। प्रभुके वचनका गोशालेने आदर न किया किन्तु प्रभुकी निन्दा की। यह सब अघातिये कर्मो का प्रभाव था।

२१–केवलज्ञान होनेपर भी अघातिये कर्म रहते हैं।

२२–शरीरके छूटनेसे अघातिये कर्म छूटते हैं।

२३–शरीर है वहां तक वेदनीय कर्म।

शरीर है वहां तक आयु कर्म।

शरीर है वहां तक नाम कर्म।

शरीर है वहां तक गोत्र कर्म।

२४-घनघातिये कर्म मेरु जितने बड़े हैं।

२५-अघातिये कर्म राईके दाने जितने छोटे हैं।

२६-शास्त्रकारने घनघातिये कर्म को रेशमकी रस्सीकी उपमा दी है।

२७-अघातिये कर्मको जली हुई रस्सीकी उपमा दी गई है।

२८-वास्तवमें प्रभुका फरमान अनन्त न्यायपूर्ण है।

२९-आत्माको माननेवाले आत्मजन्य कर्मकी चिन्ता करते हैं।

३०-शरीरको मेरा माननेवाला शरीरजन्य कर्मकी चिन्ता करते हैं।

३१-अनन्त ससारी अनन्तकालसे शरीरजन्य कर्मकी चिंता करते आये हैं और करेंगे और अनन्तकाल तक शरीरको साथमें लेकर लख चौरासी योनिमें मारे मारे फिरते हैं और फिरेंगे।

३२-जिस वस्तुमें थोड़ासा भी ममत्व रह जाता है उस वस्तुमें अनन्तकाल तक रहना पड़ता है।

३३-तो शरीरके ऊपर कितना ममत्व, खानपानसे, वस्त्रसे, आभूषणसे, मकानादि बनाकर तेल अत्तर लगाकर पञ्चेन्द्रियके विषयोंसे पोषण करके अघातिये कर्म बढ़ाये जाते हैं। वेदनीयकर्म उदय आया तो क्या नुकसान? बांधे हुए असातावाके दलिये क्षय होवे। कोई नीच कुलमें उत्पन्न हुआ तो क्या नुकसान? उसका नीच गोत्र कर्म क्षय हुआ।

बांधा हुआ अल्प या दीर्घ आयुष्य भोगनाही पड़ता है। अपनी बातका कोई आदर न करे तो तज्जन्य कर्मका क्षय होवे (सात

कारणमे आयुष्य टूटता है ऐसा श्रीठाणांगसूत्रमें फरमाया है। अपने अधिक आहारसे शस्त्रसे, अग्निसे, जहरसे आदि सातके असर्गस अनेक कारण समझना। आजका जीवन भयपूर्ण है। खान पानमें अधिककी तृष्णा है। सड़ा, गला, बासी, गंदा मक्खियों बैठा हुआ, जहरीला भोजन खाया जाता है, ब्रह्मचर्य घट गया है, जह रीली अशुद्ध हवामें रहते हैं, इसीसे आयुष्य घट गया है। औसत भारतवासीका आयु २३ वर्ष है, जब इङ्गलैण्डवासीका ५० और अमेरिकावासीका ५५ वर्षका है।)

तन्दुरुस्त रहने के सात उपाय हैं।

१-कड़ी भूख लगने पर खाना।

२-खूब चबा चबाकर खाना।

३-थोड़ी भूख रहने पर भोजन बन्द करना।

४-पथ्य भोजन करना।

५-शुद्ध हवा में रहना व सोना। (गदी हवा, बन्द मकान धामा जहर है)।

६-निश्चिन्त जीवन।

७-सदाचार (अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, क्षमादि)

कर्म ।

१–आठ कर्मोंमें मोहनीय कर्म जितना प्रबल है उतना ही वह पामर है ।

२–अन्य कर्मो की अपेक्षा इस कर्मकी स्थिति विशेष है वैसे यह जल्दी क्षय हो सकता है ।

३–श्रीतीर्थंकर प्रभु आदि सब प्रथम इस कर्मका क्षय करते हैं, इसके क्षय होनेसे और कर्म शीघ्र क्षय हो सकते हैं ।

४–चार कर्म क्षय होनेपर भी वेदनीय कर्मकी सत्ता रहती है।

५–मोहनीय कर्म भावना बलसे या ज्ञान बलसे क्षय हो सकता है, किन्तु निकाचित वेदनीय कर्म भावनाबल या ज्ञानबलसे क्षय नहीं होता, इस कर्मकी बिना भुगते यह क्षय नहीं होता ।

६–सब कर्मों में मोहनीय विशेष भला है ।

७–उसका प्रथम सरदार क्रोध विशेष भला है ।

८–बाकीके तीन सरदार चतुर मायावी हैं ।

९–मोहनीय कर्म आत्मिक गुणका घात करनेवाला है, तदपि भावनाबलसे शीघ्र क्षय हो सकता है ।

१०–जितना प्रयत्न वेदनीयकर्म क्षय करनेकेलिये करते हो उसका शतांश प्रयत्न भी यदि मोहनीयको क्षय करनेकेलिये किया जाय तो जीव शीघ्र कर्म रहित हो सकता है ।

एक मुसलमानका पश्चात्ताप ।

१–क्या करूं हुजूर ।

२–अकेला पाप करता हूँ और मौज उड़ानेवाला कुटुम्ब है ।

३–यह बगीची जंगलमें होनेसे कोई फकीर आता नहीं । शहरमें दस फकीर आवे तो १० चीमटी निकल जायें ।

४–यहाँ एक फकीर आया था उसको पहिले छ वष रोटी खिलाई । अभी दस दिन हुए फिर आया था । आज जानेका किराया दिया और वह उसकी इच्छामें गया ।

५–मैं जुमारातको (शुक्रवार) पाच फकीरोंको जिमाता हूँ ।

६–रोज आठसे बारह आना कमाता हूं । तीन नौकर हैं ।

७–प्रभुके नामकेलिए जो कुछ होजाय वह अच्छा है ।

८–मोक्षम जानेकी थोड़ी कसर रही है ।

९–वह कसर यहां मिट जाय तो मोक्ष मिले ।

१०–मोक्षमें मदद करनेवाला अपनी आत्मा सिवाय अन्य कोइ नहीं है । इसकी ऐसी भावना सुनकर आश्चर्य हुआ जैन-समाजके श्रीमन्त प्राय दान देनेके समय मुह छिपाते हैं तब यह गरीब दानके पात्रको ढूंढ रहा है । कहां दानवीर कहलानेवाले श्रीमन्त और कहां अन्य दरिद्री मुसलमानकी भावना ।

धर्मकी भावना किसमें है ? जैनमें या अन्यमतीमें ? जैनोको अपने पवित्र जीवनकेलिए कितना अभिमान है जितना अभिमान है उतनी ही पामरता दिखाई पड़ती है ।

पापाचारमें प्रवृत्त होने पर भी मिथ्या रक्षा।

१–वेश्या अपनेको शील अधिष्ठात्री देवी समझती है; वह समझती है कि व्यभिचारी पुरुष सतीसे बलात् शीलभङ्ग न करे इसलिए मैं अपने एकके शील लुटाकर सैकड़ों सतियोंकी रक्षा करती हूँ, इसलिए मेरा आशय, जीवन और कर्त्तव्य पवित्र है।

२–कसाई अपनेको धर्मी पुरुषोंकी जीवनयात्रामें सहायक समझता है वह विचारता है कि धान्य खानेवाले बहुत हैं। धान्य अल्प होता है, करोड़ों मनुष्य रोज भूखसे मरते हैं, मांसका व्यापार करनेसे उतनी धान्यकी बचत रहती है जिससे धान्यके भाव सस्ते रहते हैं और साधु पुरुषोंको भिक्षा सरलतासे मिलती है। जिससे वे धर्म आराधन अच्छी तरहसे कर सकते हैं।

३–मच्छीमार भी अपनेको धन्य जीवन समझता है कि मैं मां सस्ता अन्न करानेमें और साधुओंकी सुलभ भिक्षाका निमित्त हूं।

४–पारधी पक्षीको मारनेवाला भी अपना धन्य जीवन समझता है कि धान्य और फलादि खराब करनेवाले पक्षियोंको मारकर धान्यके आधारपर के धर्मी पुरुषोंकी रक्षा करता हूँ।

५–रेशमका व्यापारी कहता है कि मेरे व्यापारसे सूती कपड़ेका बचाव और सस्तापन होता है।

६–हाथी दाँत बेचनेवाला विरयको अखंड सौभाग्य देनेवाला अपनेको मानता है।

७–किसान (खेडुत) अपने आपको विश्वका पालक मानता है।

८–दरजी मनुष्योंकी ठंडसे रक्षा करता है।

९–जुलाहा स्त्री पुरुषकी लज्जा रखता है।

१०–चमार मनुष्यको सर्दी गर्मीसे तथा कंकर कांटासे बचाता है।

११–सुथार पलंग आदि बनाकर मानवको आराम देता है।

१२–कारीगर (कड़िये) मकान बनाकर चोरोंसे रक्षा करता है।

१३–लुहार ताले आदि बनाकर धनकी रक्षा करता है।

१४–सुनार आभूषण बनाकर सबको खुश करता है।

१५–भंगी विष्ठा उठाकर विश्वको तन्दुरस्ती देता है।

१६–वैद्य सैकड़ों रोगियोंको आराम करता है।

१७–वकील सैकड़ोंको दण्ड (सजा) से बचाता है।

१८–चोर पापके फल सबको बताता है और धर्मकेलिये सबको सावधान करता है।

१९–साहूकार ब्याजसे धन धान्य देकर हजारोंकी प्रतिपालना करता है अर्थात् सबको अपने २ जीवनसे सन्तोष है।

२०–व्यापारी धान्य भरके संग्रह करता है और कहता है कि मैं जीवनदान देता हूँ।

सबको अज्ञानताके कारण अपने २ जीवनमें सन्तोष है। आत्मज्ञान होनेमें सब अपनी गलती स्वीकारेंगे। आत्मज्ञान बिना जीवन अर्थशून्य है।

नुगतेमें क्या ?

१–नुगता न—युक्त जो करने योग्य नहीं, न करने लायक जिसका नाम नुगता।

२–करियावर – क्रिया + वर=सब पापकी क्रियामें प्रधान पाप की क्रिया वह किरियावर।

३–मोसर—महा + अवसर=सब अवसरमें बड़ा अवसर।

४–जीमनवार—जी + मरन + वार = जीके मर्या जिसका दिन वह जीमनवार।

५–चौरासी—लक्ष चौरासीमें भमावे, वह।

६–गामई—ग्राम ग्राममें भमावे, वह।

१–यह रिवाज शोक भुलानेकेलिये है।

२–पूर्वमें इस निमित्तसे लोग एकत्रित होते थे किन्तु आज सभा सोसायटी कान्फ्रेंस आदि बहुत निमित्त हैं।

३–पूर्वमें रेलवेका साधन नहीं था जिससे सबको एक साथ बुलानेका यह निमित्त था।

४–जल तलावमें पड़ा रहनेसे सड़ जाता है, अब उपयोगमें आनेवाले कुए बावड़ी व नदियोंमें स्वच्छ रहता है।

५–पुराने रीति रिवाजोंको पलटनेकी बहुत जरूरत है।

६–आज जमाना बहुत नाजुक है।

७–आजके जमानेमें दुनियांके महान् पापोंमें नुगतेका पाप भी एक महान् पाप है।

८–नुगता पापका बाप हिमालय पहाड़ है और औरपाप छोटी छोटी नदियें हैं जो उसमेंसे अन्मती हैं।

९–हिमालय न हो तो नदियां न होवें वैसे नुगता न हो वो अनेक पाप घट जावें।

१०–नुगताने इस उच्च जातिका नाश किया।

११–नुगता महा राक्षस है।

१२–उच्च कौमके पीछे गरीब जाति भी नुगतेरूप महा राक्षसके मुंहमें आगई और उसका रक्त खींच लिया।

१३–इस महाराक्षसने धनवानको गरीब और गरीबको कंगाल और कंगालको किंकर जैसे बनाया।

१४–बड़े २ धर्मात्माओंका धर्म इसने नाश किया।

१५–बड़ी २ सती स्त्रियोंका शील इसने भ्रष्ट किया।

१६–लाखों गर्भपात हर साल यह महाराक्षस कराता है।

१७–छोटी २ करोड़ों बालाओंको इसने अनाथ विधवा बनाई।

१८–लाखों स्त्रियों और पुरुषोंको इस महाराक्षसने मुसलमान और ईसाइ बनाये और बना रहा है।

१९–लाखों लड़के और लड़कियोंको अज्ञान अंधेरेमें रखकर सबको नरकमें भेज दिया। (पढ़ानेको धन नहीं बचनेसे)

२०–इस महाराक्षसने मोक्षभूमि (भारत)को नरकभूमि बनाई।

२१–इस महाराक्षसने आर्यभूमिको अनार्य बनाइ।

२२–इस महाराक्षसने आर्योंको अनार्य काम करना सिखाया।

२३–दुनियामें छाटेसे छोटा और बड़ेसे बड़ा जो फोड़ अप

राध, पाप और दुरिवाज हैं तो इन सबका मूल बीज फिजूल खर्ची है और नुगता फिजूल खर्चीका प्रसंग है। (जो देश अपना तन, धन, बल, शक्तिका फिजूल कार्योंमें व्यय करता है वह असली कार्य नहीं कर सकता। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण भारतमें शिक्षा, सम्पत्ति, स्वतन्त्रता, एकता, हुनर, कला, आविष्कार और आरोग्यकी गिरी हुई दशा है। अनेक धार्मिक व सामाजिक अपव्ययोंके कारण हम असली कार्य नहीं कर सकते।)

२४–सब व्यसनोंसे यह महाव्यसन है।

२५–यह राक्षस तम्बाकू, भांग, अफीम आदि खाना सिखाता है।

२६–मलीन भावनावाले स्त्री पुरुषकेलिये यह अन्योन्य दृष्टि, वचन और शब्द कुशीलका मानों एक मेला है।

२७–नुगता महाराक्षस है उसके मत्यसे नीचे आने वाले भी राक्षस सरीखे होते हैं वे लोग नुगताको धर्मसे भी विशेष मान देते हैं बिना नुगता किये अनाथ स्त्रीके लड़के या लड़कीका विवाह भी नहीं होने देंगे।

२८–बेचारी स्त्री पंचोंके पैरमें गिरती है, रुदन करती है कि पंच मां बाप हैं मेरी रक्षा करें, मेरे पास कुछ है नहीं, लड़की बड़ी होगई है, कृपा करके विवाह करने दीजिएगा। तब वे अपने लड्डू मांगते हैं। सब वह कहती है कि मेरे पास पैसा नहीं है उल्टा कर्जा है तब पंच जवाब देते हैं कि उधार कर जैसे अगला चुकावेगी वैसे यह भी

आज हिन्दूजाति भी मुकतेमें हरसाल लाखों रुपये सहर्ष खर्च कर रही है जब धर्मका मूल सुशिक्षामें उसस चोथाई भी नहीं खर्च करती।

चुकाना और किसीको दया आती है तो उसको रास्ता बताते हैं कि मालदारको बेटी दे दे जिससे पाँच दस हजार मिलेगा नुगता होगा और करजा दूर हो जावेगा और बेटेके ब्याहकेलिये रुपये जमा रहेंगे। बेचारी भोली स्त्री पचोंके जालमें फँस जाती है और उसी को नुगता करना पड़ता है और उससे कन्याविक्रय, वृद्धलग्न, बाल-लग्न, अनमेल विवाह आदि रिवाज शुरू होगये।

२९–अगर नुगतेका रिवाज न हो तो माता अपनी बेटीको बूढ़ेको क्यों देवे और यह बेटी दुःखी क्यों होवे।

३०–दश वर्ष पहिले जैनी २० लाख थे आज ११॥ लाख रह गये इसके मुख्य कारणोंमेंसे एक नुगता भी है।

३१–नुगतेकेलिये गरीब माँ बाप बूढ़ेको बेटी देवे हैं वह बूढ़ा मरता है तब यह जुवान होती है, जुवानोंमें सयम नहीं रहता है जिससे कुकर्म करती है, गभ रहता है, आखिर गर्भको गलाती है इस प्रकार अनेक गर्भपात होते हैं किसी विधवा माताको दया आती है या गर्भ नहीं गलता तो वह राक्षसी पंचोंमे डरकर अपनी सन्तानको मुसल-मान या पादरीको दे देती है और लड़की हो तो वेश्याको दे देती है। या कोइ इज्जतदार स्त्री मर जाती है या मुसलमानको लेकर भग आती है। इस बातका पुरावा चाहिये तो 'चांद' मासिक पत्रिकामें, ऐसे नुगतेसे दुःखी हुई सैकड़ों विधवाओंके पत्र पढ़िएगा।

२२–आज भारतमें चौदह करोड़ मनुष्य भूखे मर रहे हैं।

२३–जो किसान खेतीसे रुई और धान्य पैदा करते हैं वे भूखे क्यों रहना चाहिये।

२४–मुख्य कारण यह है कि वे लोग भी महाजनोंको ऐसक नुगते करने सीख गये आज भी महाजन लोग वेर्ल लुहार, सुनार, कुम्हार, भाट आदि सब कोमोंका नुगत कराके उनके नाम उधार रुपये लिख देते हैं। बेचारा या तो क्या उसकी सात पेढ़ी व्याज भरकर थक जाती है किन्तु यह कर्जा पूरा होता ही नहीं। (कई स्थान पं चौराजी अपने खूब व्याज व भेटकेलिये आग्रह पूर्वक मोसर कराते हैं वे गरीब जातियोंको चूसकर मनुष्य हत्याका घोरातिघोर पाप (अपराध) संचय करते हैं, चींटीकी दया पालनेवाले इस प्रकार अपने स्वार्थकेलिये मनुष्योंकी युक्तिपूर्वक हिंसाके कार्यमें निडर रहे यह कितनी भयकर भूल है, इस प्रकारकी पापकी कमाई फिर विवाह शादी, मोसर, गहना, मकान या सट्टेमें देकर पापकी बेलड़ी बढ़ाते हैं।)

२५–किसान लोगोंके शेठ महाजन लोग हैं इनका सब व्याह मोसरादि कार्य यह लोग करदेते हैं। बेचारे अनपढ़ हैं, बेचारे बिना धणीके पशु समान हैं, जितना चूसा जाय उतना उसको चूसते हैं, प्रथम तो व्याज इन गरीबोंसे लिया जाता है दूसरा काटेके पांच रुपया प्रति सैकड़ा

प्रथम काट लेते हैं फिर यौरा भाव आनी रुपया इस प्रकार छः मासमें १७॥ और बारह मासमें ३४) प्रति सैकड़ा चूसते हैं।

३६–जमाना अच्छा हो तो रुपये आजाते हैं या ब्याज आता है जमाना खराब आनेसे यह पापी राक्षसी नुगतेकी रकम डूबती देखते हैं तब शेठजी कुड़की लेकर जाते हैं और घर बार कुवा, खेत बैल आदि सब नीलाम कराते हैं, उस समयका देखाव महाजनके स्थान महाजंद महाराक्षस रूप दिखाई पड़ता है।

३७–बेचारे गरीब लोग भूखसे दुःखी होकर मुसलमान या ईसाई हो जाते हैं और मांसाहारी बनजाते हैं। इन सब पापोंके कई मुख्य कारणोंमें एक नुगता भी है।

३८–क्षेत्रमके बरा साहूकार लोग फिजूल खर्चीकेलिये नुगतेके लिये किसानको रुपये देते हैं जब यह रुपये डूब जाते हैं तब अपने मां बापको रोते हैं और रोते २ अन्धे हो जाते हैं जिससे वे पुण्य पाप, स्वर्ग, नरक, बंध और मोक्ष किसी भी बातका विचार नहीं करते और अपना जीवन झूठ, अनीति, अन्यायमय बिताते हैं। १००० साहूकारमें से ९९९ ऐसे मिलेंगे कि जो झूठ बोलते हैं और उस झूठ बोलने सिवाय अपना व्यवहार चल नहीं सकता इस बातको बड़ी धर्म सभामें धर्म गुरुके पास कहते हुए भी लज्जा नहीं लाते।

३९—धान्य, रुईको निपजानेवाले किसान लोग बिना अन्न भूखे मरते हैं और बिना कपड़े ठण्डे मरते हैं, वो धन केवल गादी तकिये पर लेटे रहते हैं जिनको खान पान और वस्त्रका खर्च मकान और गहनेका खर्च ब्याह और नुगतेका खर्च आने जानेका खर्च ये लोग कहांसे लावें। पैसेकेलिये ये मानव जन्मको हार जाते हैं ऐसा पवित्रभव मिला है फिर भी उनकेलिए मिला नहीं मिला बराबर है (अरे ! इस भवसे कल्याण न हो तो खैर, किन्तु घोर नये पाप करके आत्मा ज्यादा पापी बन महादुःखी होता है।)

४०—नुगतेसे महा आरम्भ होता है यहीं २ भट्टियें सुलगती हैं।

१—छः कायकी हिंसा प्रत्यक्षमें है।

२—झूठ तो पैसेकेलिये बोलना ही पड़ता है।

३—भाव तावमें कपट करना पड़ता है। आँके लगाने पड़ते हैं यह चोरी है।

४—नुगतेमें जीमते समय दृष्टि शब्दादि व्यभिचार होता है, खूब सीरा, मालपूआ आदि खानेसे विषय वासना बढ़ती है और जीमनेवाले भङ्ग पीकर खूब खाते हैं और कुशील सेवन करते हैं। बूढ़ेको दी हुई बाल कन्या विधवा होती है कुकर्म करती है गर्भपात कराती है पासमें पैसा न रहनेसे कुकर्मसे अपनी आजीविका चलाती है, हिन्दूजातिकी सैकड़ों स्त्रियां नित्य वेश्या बन रही हैं

(काशीमें लोग यात्री जाते हैं और अपना बहिन बेटीको छोड़ आते हैं ऐसी वहां लगभग हजारों वेश्यायें हैं।)

५–पैसेको धर्मकार्यमें लगा नहीं सकते पापके कार्यमें पैसा लगता है और पैसे रुपयेकेलिये अपार पाप करना पड़ता है।

६–प्राणातिपात, मृषावाद अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशून्य, पर परिवाद, रति, अरति, मायामोषा, मिथ्यादर्शनशल्य, इस प्रकार १८ प्रकारके पाप एक नुगता करनेसे लगते हैं।

७–जीमनेवाला और जिमानेवाला दोनोंका कुगति हैं।

८–जिमानेवाला खर्च होनेसे दुःखी या अभिमान करके कर्म बांधते हैं और जीमनेवाले पाप बढ़ानेवाला भोजन खाकर दुर्गतिमें जाते हैं।

९–एक जीमनेवाला हजारों मनुष्योंको नुगता करनेका उपदेश देता है और नुगताकेलिए प्रेरणा करता है।

१०–किसी भी अनार्यदेशमें कि जहांके लाग पुण्य पाप स्वर्ग और नरकको नहीं मानते हैं वे भी नुगता करना बुरा समझते हैं और करनेवालोंको घोर निन्दा करके उनको महान् अज्ञानी, अधर्मी और दुर्बुद्धि वाले समझते हैं।

११–आफ्रीका जैसे जंगली देशमें ऐसा रिवाज नहीं है और ऐसी बात सुनकर वे लोग महाजनोंकी मूर्खाईकेलिये पेट पकड़कर हँसे ऐसी विचित्रता है।

१२–पाठक ! भली भांति समझ गये होंगे कि अनेक दुख व पापोंको बढ़ानेवाला नुगता है। बालग्न, वृद्धलग्न, अनमेल लग्न, विशेष लग्न, कन्या विक्रय, व्यभिचार, कुकर्म, गर्भपात, धर्म और नीतिका नाश, हिंसा, झूठ, चोरी आदि १८ पापोंका बड़ा बाप है उस बड़े बापके पीछे और पाप खींचा आता है।

१३–फिजूल खर्चसे मनुष्य कर्जदार हो जाता है और कर्जकी चिन्तामें दुःखी होकर बिना धर्म आराधन किये मर जाता है और मरकर दुर्गतिमें जाता है।

१४–नुगता जीमनेवालोंकी भावना तन्दुल मच्छ जैसी रहती है खाते समय उसको आनन्द आता है, खाते २ आनन्द आना मानो एकेक कौरके पीछे नरकके दलिये बांधता है। बेचारा तन्दुल मच्छ तो बिना खाये ही नरकमें आता है नुगतावाला पैसेकेलिए महा-अनर्थ करता है धान्य भरता है और दुष्कालकी भावना भाता है। जिससे लाखों मनुष्य और करोड़ों पशु पक्षीकेलिए प्राणसे मुक्त करनेकी भावना करता है, ज्यों २ धान्य महँगा होता जाता है त्यों त्यों नुगते करनेवालेके शरीरमें खून बढ़ता है और वह तो सीता-पूरी उड़ाता है, दुनियाँ मरती है तब उसका नवीन जन्म होता है अरे ! पापी नुगता तूने दुनियाँमें क्या २ अनर्थ किया और करेगा।

१५–नुगताका जीमन यह वैराग्य वर्धक भोजन है किन्तु नुगता प्रेमी उस त्यागको भोगका रूप शीलको व्यभिचारका रूप देता है, माताको स्त्री कहनेवाला कौन ? (मदान्ध नशेमें चकचूर मनुष्य माताको स्त्री कहता है) स्त्रीको माता कहनेवाला कौन ? (वैराग्य

पान-ब्रह्मचर्य धारण करके निजकी परिणीत स्त्रीको भी बहिन कह कर छोड़ देता है) नुगता जो त्यागका वैराग्यका भोजन है उसको आनन्द मानकर खाने वाला कौन ?

१६–पशु पक्षी भी स्नेहीके मृत्यु बाद भोजन छोड़ देते हैं किन्तु कोई माल तो उड़ाता नहीं देखा गया।

१७–नुगता प्रेमियोंको जहांपर उसको जलाया वहां श्मशानमें जिमाया जावे तो भी वे बिना सकोचसे जीमेंगे उनकेलिये वैराग्य कहां है ?

१८–वैराग्यके स्थानपर जिसको भोग याद आये उसकी पात्रता कैसी ? क्या यह एक जैनीको शोभा दे ?

१९–नुगता जीमते समय यह उपदेश मिलता है—

१–जैसा यह मरा वैसे आपको मरना होगा।

२–पापसे कमाया धनका यह हाल होगा।

३–साथमें कुछ नहीं चलेगा।

४–कुटुम्बवाले तुम्हारे मरे बाद आनन्दके लड्डू उड़ाते हैं। मरनेकी खुशी मना रहे हैं।

५–आपका भी नुगता होगा।

६–आपका धन अच्छे काममें लगाओ नहीं तो ऐसे धनकी धूल होगी।

७–चेतना हो तो चेतो।

८–तू लड्डूको नहीं गटक रहा है काल तुझे गटक रहा है।

१०–मरनेवालेकी औरत रोती है सब लोग कोलाहल करते हैं

वह रोती है और पंच उसके द्वार पर मांहें ऊंची कर लड्डू उड़ा रहे हैं।

११—रात्रिको भट्टियें चलानेसे करोड़ों जीवोंकी हिंसा होता है।

१२—आधा सेर मिठाईकेलिए सैकड़ों मनका बना हुआ आरम्भ और उसने जितने पापसे धन कमाया उस पापका हिस्से दार जीमनेवाला होता है।

१३—भव्य आत्माओंकेलिए अनायास यह विचारमाला लिखी गई है भव्यको ही लाभ होगा। और भाई भी समझनेकी कोशिश करें।

१४—यह लेखमाला समस्त भारतवासियोंके ध्येयसे लिखी गई है। हंस बुद्धि रखकर सार ग्रहण कीजियेगा।

(विचारशील पुरुषोंका अनुमान है कि शुरूआतमें कोई योग्य सेठ वृद्ध वयमें खूब दान पुण्य धर्म आराधना करके परलोक होगये उनके विनयवान पुत्रने पिता वियोगके दु:खमे अन्न छोड़ दिया तब उनके सगा सम्बन्धी उनके घर सादा भोजन बनवाकर जीमने बैठे और कहा तुम खाओ तो खावें यह आग्रह देख उसे जीमना पड़ा इसका प्रत्यक्ष रिवाज आज भी सगा-सोई मरनेवालेके घर जीमते हैं और इसका इतना दुरुपयोग हुआ है कि खूब घी खाते हैं व कई तो खर्चेसे तंग आजाते हैं। जब वह पुत्र मीठा नहीं खाता था, यह बात स्नेहीओंने सुनी तो फिर एक दिन गुड़की कोई चीज बनवाकर कुटुम्बी लोग थाली पर बैठकर उस पुत्रको

जीमनेका आग्रह किया, इससे वह मीठा भी खाने लगा, इस बात की गांवमें प्रशंसा चली कि कितना पिताका भक्त है, यह सुनकर दूसरे सेठके पुत्रने भी ऐसा ही किया फिर ज्यादा भक्ति दिखाने और स्नेह बतलानेको ज्यादा मनुष्य जीमनेको बुलाये गये और आखिर यह एक रिवाज होगया और आज वही विषय समाजके तन, धन, धर्म और सुखका विनाशक बन गया है। विद्या रहित समाजमें कई अच्छी रीतियां भी बिगड़कर भयंकर बनजाती हैं आज भारतमें ऐसी सैकड़ों कुरीतियां चल रही हैं उसका नाश करने वाले मनुष्यजातिको जीवित दान देनेवाले भविष्यमें माने जावेंगे।—सम्पादक।)

सुखी बननेका उपाय ।

१—तन्दुरुस्ती ही उन्नतिका पहला साधन है, इसकेलिये गन्दी हवा, गन्दा मकान, गन्दे कपड़े, सड़ा, गला, बासी या बहुत मिर्च मसालेका खुराक छोड़ दो, बजारू कोई चीज न खाओ।

२—विद्यासे ही मनुष्य जाति, समाज, देश, राज्य-धर्म औ व्यापारमें जो बुराइयां अर्थात् दुःख देनेवाले पाप घुस गये हैं, उन्हें सुधार सकते हैं। अतः हरएक मनुष्य विद्या पावे ऐसा उद्योग करो

३—भारतके एक मनुष्यकी औसत कमाई दो आना है, अ विलायतके एक मनुष्यकी कमाई दो रुपया रोज है। जो प्रज विदेशका बना हुआ माल खरीदती है वह दुःखी व गरीब होती है आज इसीसे हिन्दमें चौदह करोड़ मनुष्य पूरा अन्न नहीं पाते।

४—६० करोड़के कपड़े, १८ करोड़की शक्कर, ४ करोड़की मोटर, १ करोड़की साइकल, २७॥ लाखके बटन, ४॥ करोड़की दवाइयां, १॥ करोड़के साबुन, ५॥ करोड़की बिस्कुट, ६२ लाखके खिलौने, ८१ लाखकी कलम स्याही पेन्सिल, एक करोड़के फटाके आदि मिलाकर कुल २३१ करोड़ रुपयोंका माल आता है।

५—फटाके फोड़नेसे वृथा गन्दी होती है—अनेक मनुष्य जल मरते हैं, करोड़ों रुपये विदेश जाते हैं, देश दुःखी होता है, इसलिये कभी फटाके मत छोड़ो।

६—शराबमें हरसाल लगभग पचास करोड़ रुपये सरकार महसूलके देने पड़ते हैं तथा और स्वर्च ७५ करोड़ रुपये होता है। उससे करोड़ों मनुष्य भारतकी स्वर्ग भूमिमें नारकी तुल्य दरिद्रता, रोग, दुराचार और झगड़े (कलह) के दुःख भोग रहे हैं, इसलिए शराब छोड़ दो व औरों को छुड़ानेकेलिये तन मन-धनसे कोशिश करो।

इति

अनशन स्मारक—

॥ ॐ अर्हम् ॥

आत्म जागृति ग्रन्थमाला पुष्प २२

"पशु वध कैसे रुके !"

श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री १००८ श्री रसमचन्द्रजी महाराज साहब की सम्प्रदाय के उग्र तपस्वी श्री १००७ श्री सागरमलजी महाराज साहब ने उत्कृष्ट पचरंगन तप किशनगढ़ में ५१ दिन का पूर्ण किया उनके पवित्र स्मरण में 'जैन पथ प्रदर्शक' के ग्राहकों को भेंट।

लेखक—श्री सुरेन्द्रनाथ जी जैन

प्रकाशक—

मगनमल कोचेटा

मंत्री—आत्मजागृति कार्यालय

जैन गुरुकुल ब्यावर

मुद्रक—पद्मसिंह जैन, जैन प्रेस, आगरा।

प्रथम-प्रति-२००० संवत् १९८६ } सन् १९२९ { मूल्य =)॥ वीर संवत् २४५६

वचनामृत ।

१—जीवों की रक्षा करना है सो वास्तव में अपनी ही रक्षा करने के समान है। कारण अहिंसक ही इस लोक में निर्भयता, प्रसन्नता, उदारता, आरोग्यता व सुयश का सुख भोग कर परलोक में परमानन्द पाता है। "कर भला होगा भला" "सुख दियां सुख होत है"

२—मन, वचन, काया से किसी भी जीव को दुःख देना, दिलाना व दुःखी हो ऐसे कामों से सहानुभूति रखना हिंसा है। पर की हिंसा निश्चय में खुद ही की हिंसा है। कारण कि हिंसक मनुष्य भय, रोग, कठोरता, मृत्यु, अपयशादि दुःख यहां भोग कर परलोक में भयंकर दुःखमय दंड धारण करता है। "बुरा कर बुरा होगा" "दुःख दियां दुःख होत है"

३—अहिंसा से हृदय में प्रसन्नता होकर आरोग्यता व सुन्दरता प्राप्त होती है और हिंसा के भावों से क्रूरता आकर अनेक रोग व कुरूपता होती है।

४—धर्म का लाभ निश्चय से इस लोक में मिलता है। कारण सत्य देव का फरमान है कि "कडे माणे कडे" अर्थ शुरू करते ही क्रिया अपना जितने अंशों में प्रगति करते हैं उतने अंशों में सिद्धि मिलती है। अन्य साधनों में तत्काल सिद्धि होती है।

५—जैनधर्म वीरों का है, सिपाहियों का है जो जैनी बनना चाहे वह पहिले झूठ, डरपोकपन, संकुचितता, कायरता, दोष दृष्टि का नाश करके सत्य, निडरता, उदारता, व्यापकता, वीरता, पुरुषार्थ, गुणानुराग व धैर्य को प्राप्त करे।

६-जो किसी से घृणा करता है वह स्वतः से घृणा करता है, फूट फैलाना यह विनाश का सुगम साधन है, निन्दा करना सो शत्रु बढ़ाने का सीधा उपाय है दोष दृष्टि रखना सो पतन का प्रधान कारण है, लोभ करना सो अकल्याण व अरुचि की निशानी है। अभिमान यह पतन का चिन्ह है, कपट झूठ सी विष मिश्रित मिष्ठान्न है, काम भोग है सो शहद की भरी तलवार की धार के बराबर है, इन सब दोषों का त्याग है सो दुःखों का नाश है।

७—थोड़ा पढ़ो परन्तु खूब विचारो और आचार में लाओ तो सदा सुखी रहोगे।

—चैतन्य

विषयानुक्रमणिका ।

नं०	विषय	पृष्ठ

❀ ॐ अर्हम् ❀

पशु-वध कैसे रुके ?

अहिंसा प्रधान भारतवर्ष में सबसे अधिक पशुवध होते देखकर बड़ा आश्चर्य होता है। यद्यपि यहां के समस्त धर्मों का मूल अहिंसा है, किसी जीव को न मारना यहां के लोग अपना कर्त्तव्य सा समझते हैं, हिंसक पशु मांस भक्षी यहां तुच्छ हुए से देखे जाते हैं फिर भी आश्चर्य है कि यहां पर अन्य देशों की अपेक्षा सबसे अधिक पशुवध होता है।

यहां पर जैन, वैष्णव, सनातन, आर्य आदि अनेक धर्म हैं जिनके यहां अहिंसा का बड़ा भारी महत्त्व है। इन धर्मों के मानने वाले लोग स्वयं हिंसा नहीं करते और इस वृद्धिगत हिंसा को देखकर उनका हृदय बहुत दुःखित होता है। इसलिये पशु रक्षार्थ वे प्रति वर्ष लाखों का दान करते हैं, नई नई गौशालाएं खुलाते हैं और तरह २ के उपाय करते हैं परन्तु फिर भी हिंसा घटने की अपेक्षा और भी बढ़ती ही जाती है।

जिस निमित्त लाखों रुपये प्रतिवर्ष खर्च किये जाते हैं, उसका परिणाम बकार में जाते देखकर उनकी निराशा की सीमा नहीं रही है। आज उनके समक्ष यह एक बड़ी भारी समस्या उपस्थित हुई है कि वे अपने द्रव्य को किस तरह से, कैसी संस्थाओं में लगावें जिससे पशुओं की रक्षा हो, पशुवध अटके और इस अहिंसा प्रधान देश में पुनः अहिंसा का प्रचार हो।

पशु रक्षा धार्मिक ही अंग है, यह बात नहीं है। राष्ट्र की आर्थिक एवं नैतिक उन्नति के लिये भी पशु रक्षा की खास जरूरत है। पशुओं के बिना कोई भी देश यथेष्ट अन्न पैदा नहीं कर सकता है और जहां यथेष्ट अन्न पैदा नहीं होता है वहां की प्रजा भूखी रहती है भूखी प्रजा व्यापार या नवीन २ आविष्कार नहीं कर सकती, वहां आलस्य एवं उदासीनता का राज्य रहता है और जहां आलस्य का राज्य होता है वहां नैतिक पतन अवश्यम्भावी है। इसीलिये राष्ट्र की आर्थिक एवं नैतिक उन्नति के लिये पशुओं की रक्षा की खास जरूरत है।

भारतवर्ष उष्णकटिबन्ध (Torrid Zone) में होने से कृषि प्रधानदेश है यहांकी ७७ ३ प्रतिशत(सैंकड़ा) जनता खेती करती है और कृषि ही उनकी आजीविका है। अन्य देशों में तो कृषि कर्म लोहे के हलों एवं मशीनों द्वारा किया जाता है परन्तु भारतवर्ष में न तो मशीनों द्वारा कृषिकर्म होता है और न हो ही सकता है। ऐसी दशा में यहां तो पशुवर्ग की अनिवार्य

आवश्यकता ही है इसे कोई भी अस्वीकृत नहीं कर सकता।

परन्तु पराधीन भारत की दशा कुछ और ही है। जहां पशु धन की अनिवार्य आवश्यकता है और जहा कृषक वर्ग की वृद्धि क साथ २ इसके पशुधन की भी वृद्धि होनी चाहिये थी यहा दिन प्रतिदिन इस धन का ह्रास होता आता है। सन् १८७१ में अंग्रेजो के शासन काल में इस देश के पशु धन की सख्या १४ करोड़ से ऊपर थी उस समय भारत की जन संख्या २७ करोड़ से कुछ ज्यादा थी और इस दृष्टि से यहा दो मनुष्य पीछे एक पशु पड़ता था परन्तु उसक पच्चीस वर्ष पीछे ही पशु सख्या घटकर ६ करोड़ ७ लाख रह गई। सन् १६०६ ई० की ४ अगस्त को सरकार ने एक पशु कान्फरन्स (Cattle- Conference) की थी उस समय भारत का गोधन निम्न प्रकार था:—

साड या बैल		गाय		भैंस		पड्डे	
१०६११८२१	१०१८४३१२	१६४७७५५	४२८२६४८	३८२१४०८	३४१४६०१	६४०१६१०	८६६३५०८
सन् १६०४	सन् १६०६	सन १६०५	सन १६०६	सन् १६०४	सन् १६०६	सन् १६०४	सन १६०६

उपर्युक्त आकड़ा स ज्ञात होता है कि केवल ५ वर्ष क

अन्नराम में बैलों की सख्या में ७७५५०६ की, गायों की सख्या में ६६५१०७ की भैंसों की सख्या में ६५०३ की और बछड़ों की संख्या में ५०८३०८ का भारी घटती हुई है। यह तो दूध देने वाले एव कृषि के योग्य पशुओं की रोमाञ्चकारी घटती का हिसाब है। गऊ को माता कहने वाले भारतवासी गौ और गौवंश की इस भीषण क्षति को किस पत्थर की छाती से सहन करते हैं, यह बहुत सोचने पर भी समझ में नहीं आता है।

भारतीय पशुधन के इस भीषण ह्रास को देखकर सरकार को तत्कालीन कृषि विभाग के प्रधान आमगेचल सर विलियम विग्यी सी० आई० इ० ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि —

"भारतवर्ष की आर्थिक अवनति में सबसे विलक्षण बात तो यह है कि इस देश का पशुधन दिन पर दिन घटता जाता है। सन् १८९३-९४ में भारत में जितने पशु थे, वे सन् १९०८-९ में बुन्देलखण्ड प्रान्त में ४ प्रतिशत, यू० पी० में ३ सैकड़ा गुजरात में १८ सैकड़ा, दक्षिण में २० सैकड़ा, बर्मा में ५ सैकड़ा और मद्रास प्रान्त में ४ सैकड़ा कम हुआ है। इन १५ वर्षों में भारतीय पशुधन ७१ सैकड़ा कम हुआ है।"

सर विलियम हन्टर ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि —

"भारत की उन्नति में सबसे बड़ा विघ्न तो यह है कि इस देश में कृषि योग्य पशु थोड़े हैं और जो है भी वे बहुत कम ... हैं'

अन्य देशों में न तो अहिंसामय धर्म का ही प्रचार है और न कृषि के लिये पशुओं की अनिवार्य आवश्यकता ही है वहां पर पशुओं की संख्या बढ़ रही है। सन् १९१७ में अन्य देशों के परिमाण में भारत के पशुधन का परिमाण निम्न प्रकार था—

देश का नाम	घोड़ा	गाय बैल	भेड़ा	बकरा	सूअर	प्रति मनुष्य
	लाख	लाख	लाख	लाख	लाख	
इंग्लैंड	१८१	१२४	२७७		३०	[illegible]
आस्ट्रेलिया	२४१	८६	७८८		८१	१७०
कनडा	३८	८०	२३		३६	२३
फ्रान्स	२४	१२४	१०६		४२	१३
जर्मनी	३३	२१४	६१	४३	१७२	६
जापान	१५	१४		१	३	२४
अमेरिका	२१०	६४५	४७६		६७	२४
भारत १९१२	१७	१५००	२७०	३३९		७

उपर्युक्त आंकड़ों से भारत की पशुधन सम्बन्धी निर्धनता स्पष्ट झलकती है। इस छोटी सी संख्या में भी प्रतिवर्ष गोवध बढ़ती होती जाती है यह समाचार भी सत्य है।

यह पशुवध क्यों होता है ? क्या यह किसी भी प्रकार बंद भी हो सकता है ? हो सकता है तो कैसे ? इत्यादि कुछ ऐसे आवश्यक प्रश्न हैं जिनका निराकरण होना पहिले जरूरी है और यदि पशु रक्षा के पक्के हिमायती अपने दिये हुए द्रव्य का पूर्ण सदुपयोग करना चाहें तो उन्हें इन मूल कारणों पर ध्यान देना ही चाहिये।

यहां पशुवध तीन कारणों से होता है (१) धर्म (२) व्यापार और (३) भोजन।

जिस देश में सब धर्मों के मूल में अहिंसा का प्राधान्य हो, जहां की प्रजा अहिंसा के वातावरण में जन्मी और पुष्ट हुई हो; उस देश में हिंसा भी धर्म का एक अंग और सो भी आवश्यक अंग समझा जाता हो। भारतवर्ष में मुख्यतया ३ वर्ग के लोग बसते हैं। (१) हिन्दू (२) मुस्लिम (३) भील आदि असभ्य जंगली जातियां। इनमें से उच्च कुलीन कुछ करोड़ हिन्दुओं की संख्या को जाने दीजिये अवशिष्ट तीनों प्रकार के लोगों में धर्म निमित्त पशुवध करना पाप नहीं प्रत्युत पुण्य (कारे सवाब) समझा जाता है। वैसे तो हिन्दू अपने आपको बड़ा उच्च समझते हैं वे किसी की हिंसा नहीं करते और न करने या कराया करते हैं परन्तु उनके तीर्थ स्थान और देवस्थान विजया दशमी (दशहरा) एवं नवदुर्गा के दिनों में तो लाखों निरपराध मूक जानवरों के खून से रंग जाते हैं। उन स्थानों के पंडे जो आपको उच्च कुलीन ब्राह्मण सिद्ध करते हैं अपने निर्दय

हाथों में तेज छुरी लेकर लाखों छोटे बड़े पशुओं को बड़ा नृशंसता पूर्वक बलि कर देते हैं। पापमय इस कृत्य के लिये उन्हें कहीं कहीं दो पैसे, कहीं एक आना और ज्यादे से ज्यादे पांच पैसे मिलते हैं परन्तु इसके लोभ से वे हाथी जैसे डील डौल वाले पचेन्द्रिय भैंसे को बड़ी नृशंसता पूर्वक वध करते हैं। चारों वर्णों में अपने आपको सर्वोच्च समझने वाले इन पंडे ब्राह्मणों की अधिक से अधिक केवल ५ पैसे के लिये की गई इस रोमांचकारी कृति में और अपनी उदरपूर्ति के निमित्त राक्षस द्वारा की हुई १-२ पशु की हिंसा में क्या अन्तर है? केवल यही कि राक्षस अपनी उदरपूर्ति के निमित्त एक या दो जीव की हिंसा करता है तब ये धर्म के भयंकर ठेकेदार केवल सम्मान के लिये एक हृष्टपुष्ट भैंसे या बकरे की हिंसा कर डालते हैं और सो भी धर्म के नाम पर। यह महाखेद की बात है।

प्रायः प्रत्येक प्रान्त में बीसियों ही नहीं प्रत्युत सैकड़ों, हिन्दुओं के ऐसे तीर्थ स्थान निकल आवेंगे जहां धर्म के नाम पर प्रति वर्ष सैकड़ों हजारों पशुओं का बलिदान दिया जाता है। वैसे तो उन स्थानों में वर्ष के १२ महीनों तीसों दिन बलि दी जा सकती है परन्तु फिर भी प्रत्येक तीर्थ पर कुछ ऐसे खास दिन निश्चित हैं जिनमें उन तीर्थों पर मेला होता है और सैकड़ों हजारों मूक जानवरों की बलि चढ़ाई जाती है। इन मेलों की तिथियां एक सी नहीं होतीं; किसी तीर्थ पर किन्हीं

तिथियों में तो दूसरों पर दूसरी तिथियों में बलिदान के मेले लगते हैं। मुख्यतया नवदुर्गा (कुँआर) और चैत मास में सब तीर्थस्थानों पर बलिदान के मेले लगते हैं। भारत में १०४४ जिले हैं, और प्रत्येक जिले में १-२-३ तक ऐसे बलि स्थान मौजूद हैं जिनपर वर्ष में ५०० से १०००-१५०० तक पशुवध होता है परन्तु कुछ स्थान ऐसे भी स्थान हैं जहां वर्ष भर में १० हजार से लेकर १५-२० हजार तक पशुवध होता है। यहां कुछ ऐसे ही हिन्दू तीर्थों का उल्लेख करना उचित होगा।

(१) विजाशिनी देवी—मेसवा (देवास)—यहां पर माह और वैशाख के दिनों में दो बार मेला लगता है। यहां पर वर्ष भर में १५-२० हजार तक भैंसा, बकरा आदि बलि किये जाते हैं।

(२) विन्ध्याचल—(मिर्जापुर)—यह हिन्दुओं का बड़ा भारी तीर्थ स्थान है। यहां पर लक्ष्मी एवं सरस्वती देवी के सिवाय एक महाकाली देवी का मन्दिर है जो नगर के मध्य में अवस्थित है। मूर्ति के सामने एक बड़ा भारी गहरा चौक बना हुआ है इसी में भैंसा, मेढ़ा, बकरा आदि की बलि दी जाती है। चैत्र और आसोज के दिनों के मेलों में यहां प्रति दिन २५०-३०० पशु बलि किये जाते हैं। यह केवल महाकाली के ही मन्दिर का हाल है। अन्य दोनों मन्दिरों में भी यही हाल है। यहां पर ५३२ पण्डे हैं जिनमें से कुछ को छोड़कर शेष सभी

मांसाहारी हैं यहां पर राजे, महाराजों से लेकर सामान्य से सामान्य वर्ग तक के हिन्दू आते हैं और अपनी तरफ से बलि दिलाते हैं। इसकी सबसे बड़ी विलक्षणता तो यह है कि इस तीर्थ की अन्य अन्य गावों में ६० शाखाएं हैं जिनमे से प्रत्येक पर १—२ हजार तक पशु हिंसा होती है।

(३) कालीदेवी कलकत्ता।—प्रतिदिन बीसियों बकरों की बलि चढ़ती है। नवदुर्गा और दशहरा के दिन बलिदानों की संख्या दो हज़ार से ऊपर पहुँचती है।

(४) बालासुन्दरी देवी-काशीपुर (नैनीताल) —यहां पर चैत सुदी ५ से १५ तक मेला लगता है लगभग ५ हज़ार पशु बलि दिये जाते हैं।

(५) जीवनमाता-चर्खेला (जयपुर) -आसोज सुदी ५ से १२ तक नौदुर्गा का मेला लगता है यहां पर पशुओं को छोड़कर पक्षियों को भी बलिदान किया जाता है। वर्ष में लगभग ४-५ हज़ार पशु पक्षी बलि होते हैं।

(६) कैलादेवी-करौली (राजपूताना) -नवदुर्गा में हजारों पशुओं की बलि होती है।

(७) भैरोंजी-रींगस (मारवाड़) —नवदुर्गा में २-३ हज़ार की बलि होती है।

(८) इन्द्रगढ़-(कोटा)—१-१॥ हज़ार तक वध होता है।

इत्यादि सैकड़ों स्थान हैं जहां धर्म के नाम पर लाखों

पशुओं की बलि दी जाती है। यू० पी०, सी० पी०, बंगाल, बिहार, मद्रास प्रान्तों में, ऐसे बलिस्थान बहुत हैं जिन पर वर्ष भर में सब मिलाकर कम से कम १० लाख से ऊपर पशु-वध होता है। ईद के दिनों में तमाम देश में ४००-५०० गायें कुर्बान की जाती हैं जिस पर हिन्दू लोग मुसलमानों को हत्यारा आदि अनेक अपमानजनक शब्दों से सम्बोधित करते हैं परन्तु वे खुद अपने धर्मस्थानों पर लाखों पशुओं का वध कर डालते हैं इसका उन्हें ज़रा भी ध्यान नहीं होता।

यह है मध्यम दर्जे की हिन्दू जनता की हालत। उत्तम दर्जे के हिन्दुओं के यहां भी कम हिंसा नहीं होती। शायद ही ऐसा कोई रजवाड़ा (स्टेट) होगा जहां पर दशहरा के दिन १०-५ बड़े ? भैंसों की बलि न दी जाती हो। बकरों की संख्या तो बीसियों के ऊपर होती है।

निम्न वर्ग के हिन्दुओं में चमारों, भंगियों, धना, जुलाहे, धोबी, लोध, खटीक आदि जातियों का समावेश होता है। इन लोगों में यथार्थ ही हिंसा नहीं होती, प्रत्युत भोजन निमित्त भी होती है। त्यौहारों के दिन धर्म के नाम पर तो ये लोग अपने देई-देवताओं पर बलि चढ़ाते हैं और घर पर मांसाहार के लिये पशुवध करते हैं। इस तरह भी लाखों जीवों का प्रति वर्ष वध होता है।

मुसलमानों के धर्म में तो अहिंसा का कुछ मूल्य ही नहीं है। परन्तु फिर भी ईद के त्यौहार पर इनके यहां हिंसा करना

लाज़िमी हो जाता है। बिना पशुवध के इनके यहां खुदा प्रसन्न नहीं होते। भोजन के निमित्त होने वाले वध के उपरान्त इनके यहां ईद के अवसर पर लाखों बकरों और हज़ारों गायों की कुर्बानी की जाती है।

यह तो हुआ धर्म निमित्तक हिंसा का संक्षिप्त वर्णन। व्यापार और भोजन निमित्त हिंसा का वर्णन और भी विस्तृत है। ये विषय इतने बड़े हैं कि उनपर पूर्ण रीति से विवेचन करने पर एक स्वतन्त्र लेख बन जायगा। इसलिये हम संक्षेप से व्यापार के नाम से जिन ९ कारणों से पशुवध होता है उनका संक्षिप्त उल्लेख किये देते हैं:—

(१) चमड़े का व्यापार। (२) सूखे मांस का व्यापार। (३) जमे हुए खून का व्यापार (४) चर्बी का व्यापार (५) हड्डियों का व्यापार (६) सींगों का व्यापार (७) गाले खून का व्यापार (८) गोरी फौज व सिपाहियों के लिये (९) सामान्य भोजन।

इत्यादि कई एक कारण हैं जिनके कारण भारत का पशु धन बड़ी शीघ्रता से घटता जा रहा है। उपरोक्त कारणों में से प्रत्येक की भीषणता की तरफ भी मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं।

(१) चमड़े का व्यापार—भारतवर्ष सब देशों से गरीब देश होने से और यहां पर अनावृष्टि एवं अतिवृष्टि जन्य बाल दुर्भिक्षों के कारण पशुओं की कीमत अन्य देशों की अपेक्षा

सस्ती पड़ती है। जिस देश की एक तृतीयांश जनता को आधे पेट रूखा सूखा भोजन मिलता है वहां के मूक जानवरों की कीमत सस्ती हो इसमें आश्चर्य कुछ नहीं है।

आजकल यन्त्रवाद का ज़माना है, तरह २ के यत्रों का आविष्कार होता जाता है सैकड़ों हज़ारों तरह के कल, कारखाने तो पहिले ही से मौजूद हैं, उनमें भी अब दिन प्रति दिन वृद्धि होती जाती है। उन कल कारखानों को चलाने के लिये चमड़े के पट्टे चाहिये। इसलिये ज्यों २ कल कारखानों की संख्या वृद्धि होती जाती है त्यों २ चमड़े की मांग बढ़ता जाता है। दूसरी बात यह भी है कि चमड़े की बनी हुई वस्तुएं जन साधारण के अधिक व्यवहार में आने लगी हैं। आज से १० वर्ष पहिले लोग चमड़े का जूता ही पहिनते थे परन्तु आज तो चमड़े की बनी हुई वस्तुएं सिर तक पहुंच गई हैं। जिस चमड़े को छू कर लोग हाथ धोते थे उसी चमड़े से मनीबेग आजकल के शौकीनों के हाथों की शोभा बढ़ाते हुए दीख पड़ते हैं। असली बात तो यह है कि जूतों के सिवाय फैशन की भर म्मत के लिये चमड़े की सैकड़ों वस्तुएं चाहिये फिर सोचिये कि चमड़े का व्यापार क्यों न बढ़े?

मैं यह पहिले कह चुका हूँ कि भारत निर्धन देश है इस लिये यहां पर सबसे सस्ते पशु मिल जाते हैं। उनको काटकर आज भारतवर्ष चमड़े और मूल्य मांस के ग्राहक देशों की मांग को सबसे अधिक परिमाण में दे रहा है। देखिये निम्न वर्षों में इस प्रकार चमड़ा निर्यात (विदेश में गया) हुआ—

मत	पकी / मनया लाल	मूल्य	मत	कपी ग्याले	मूल्य रु०
१९००	७ फराद	×	१९०० + १	७८०७५०००	११४८०००००
१९०१	८७० लाग	+	१९०१ + २	२७१०००००	८२३००००
१९०२	१६० ,,	+	१९०२ + ३	४८३०००००	=४४०००००
१९०३	४०० ,,	×	१९०३ + ४	३१५००० ०	=६३ ० ००
१९ ४	१७५ ,,	×	१९०४ × ५	+	११५०३= ५०
१९०५	×	+	१९०६ + ०६	पौंड	७२६३०००
१९१०	१००३८०००	+	१९१० × ११	२३२५००० ,,	९९९६०००
१९११ + १२	१०६०९०००	×	१९१२ × १२	२३५२५००० ,,	९९६५०००

सन् १९११ में इस प्रकार निर्यात हुआ—

अमेरिका	२	करोड़ ६०	लाख रुपये का
जर्मनी	२	,, ३३	,, ,,
आस्ट्रिया	१	,, ४८	,, ,,
इटाली	०	, ७६	, ,,
इंगलैंड	०	,, ५२	,, ,

उपर्युक्त आंकड़ों से मालूम पड़ेगा कि कच्ची और पक्की खालों की निर्यात होने वाली संख्या ३॥ करोड़ प्रतिवर्ष होती है। पराधीन भारतवर्ष ही अपने अमूल्य पशुधन का इस तरह कौड़ियों के भाव बेचता है। पशुधन की घटी का सर्व प्रथम कारण यही चमड़े का व्यापार है। जो देश अपने देश के ३॥ करोड़ पशु केवल चमड़े के लिये काट डालेगा उसका पशुधन कहां तक नहीं घटेगा?

(२) पशुधन के विनाश का दूसरा कारण सूखे मांस की तिजारत है। मैं आपको कह चुका हूँ कि यहां पर निर्धनता के कारण पशु सस्ते मिल जाते हैं। आस्ट्रेलिया एवं डनमार्क में यद्यपि छोटे २ देश हैं यहां की आबादी भी लगभग ५० लाख है इन दोनों देशों का मुख्य धंधा पशु पालन ही है। १—१ व्यापारी के पास १०—१० हज़ार तक पशु हैं। यद्यपि यहां पशुओं की बहुतायत है परन्तु वे राष्ट्र सम्पन्न होने से उनके यहां पशुओं की क़ीमत भारत के पशु की अपेक्षा अत्यधिक ज़्यादा है। यहां एक मामूली भैंस ४०—५० तक आजाती है

परन्तु उक्त देशों में एक भैंस की क़ीमत १२५—१५० से कम नहीं होती। ऐसी परिस्थिति में वे अपने देश के पशुओं को न मारकर भारत के सस्ते पशुओं के मास पर ही निर्धारित रहते हैं।

देहातों में कसाइयों को दूध से उतरी हुई गायें एवं भैंस ० रुपये तक में मिल जाती हैं। भैंस और गाय कमसे कम ६ महीने दूध नहीं देती। उनको घर पर ही चुगाना (खिलाना) पड़ता है। एक दिन में एक पशु कमसे कम ।।) का चारा खा सता है। इस तरह एक भैंस ६ मास में ९०) रु० का चारा खा सकी है। बिचारे गरीब किसानों में इतनी हिम्मत कहा कि एक बेकार जानवर का ९०) रु० खर्च करके खिलायें। बच्चे वाली भैंस १००) रु० में मिल जाती है। इस परिस्थिति में किसान यही सोचकर कि दूध से उतरी हुई भैंस को बेचने से ९०) रु० मारे के और ७०) रु० मूल्य की बचत होती है इसलिये उस भैंस को बेचकर हाल ही में १००) रु० की भैंस ले आता है इस तरह भी उसे १०) नगद बच जाते हैं। यही कारण है कि बड़ी मोटी ताज़ी दूध से उतरी हुई भैंसें बहुत ही थोड़े मूल्य में कसाइयों के हाथ पड़ जाती हैं।

जब किसान ही ने भैंस बेच डाली तो कसाई से तो पशु रक्षा की आशा रखना बेकार ही है। वह उस भैंस को मारकर इस तरह लाभ उठाता है ——

१५—०—०	मांस	३०—०—०	मूल्य भैंस का
२०—०—०	चाम		
३—०—०	हड्डी		
१०—०—०	चर्बी	२४—०—०	नकद मफा
५—८—०	खून	———	
०— —०	सींग	५४—०—०	
———			
५४—०—०			

यह वह अभागा देश है जहां जीवित पशु की अपेक्षा मृत जानवर का अधिक कीमत पैदा होती है। जिस देश में जीवित पशुओं की यह दुदशा हो वहां पशुवध का बाज़ार गर्म हो इसमें आश्चर्य क्या है? कहना व्यर्थ है कि इस देश में सूखे मांस का व्यापार एक मुख्य व्यापार है।

इग्लैंड, चीन, ब्रह्मा, जापान आदि देशों में ऐसे बड़े पशु प्रथम तो कम होते हैं-दूसरे उनकी कीमत बहुत अधिक होती है इसलिये मांस प्राप्ति के लिये वे अपने यहां के पशु का वध नहीं कर सकते। परन्तु भारत में तो जीवित की अपेक्षा मृत पशु की अच्छी कीमत पैदा की जा सकती है। भारत का यह कैसा दुर्भाग्य है? सब कोई यह तो आसानी से समझ सकता है कि अन्य देश मांस प्राप्ति के लिये भारत पर आधित हैं। देखिये इन सालों में केवल कलकत्ते से इस प्रकार मांस बाहर भेजा गया——

सन्	मन	लगभग इतने पशु काटे गये
१९१७	१५०,०००	३३,५०,०००
१९१८	१६५,०००	३५,३५,०००
१९१९	१७५-०००	४१,०३,०००
१९२०	२००,०००	४५,०३,५००

उक्त आंकड़ों से स्पष्ट विदित है कि प्रतिवर्ष केवल सूखे मांस के लिय इस अभागे देश में ४५ लाख निर्दोष मूक प्राणियों के गले पर छुरी फेरी जाती है। प्रतिवर्ष मांस का निर्यात बढ़ता ही जाता है और पशुवध का क्रम दिन प्रतिदिन तीव्रतर बनता जाता है।

(३) सूखे जमे हुए खून का व्यापार—जिस देश में मास सम्बन्धी व्यापार खूब उन्नति पर हो वहा गीले व सूखे खून का व्यापार खूब उन्नत हो यह स्वाभाविक ही है। जहां २ कसाई खाने हैं वहा २ सर्वत्र खून इकट्ठा करने और उसे सुखा कर एकत्र कर डब्बों में पैक करने का भी प्रबन्ध रहता है। प्रतिवर्ष हजारों मन ऐसा जमा हुआ खून (condensed blood) पाश्चात्य देशों को निर्यात किया जाता है। कैसा भी लाल रंग पक्का हो या कच्चा, खून का मिलावट बिना बन नहीं सकता। इस जमे हुए खून से लाल रंग और कई तरह की दवाइयां बनती हैं। हम लोग मंदिरों में जिस केशर से भगवत्पूजन

करते हैं यह गाय के खून से रंगी जाती है। इन्साइक्लोपेडिया नाम की पुस्तक के भाग ११ के पृष्ठ नं० १४६ में लिखा है कि—

Greaso and butter are still frequently mixed with shreado of beaf dipped in Safforn are also used

(४) चर्बी का व्यापार—इस देश में चर्बी का व्यापार भी खूब चमक पर है। इस विज्ञानमय युग में यह बात सिद्ध होगई है कि यदि कपड़े पर स्थाई चमक कायम रखनी हो, यदि मजबूत सुन्दर सूत तैयार करना हो तो उस सूत को एक बार चर्बी में अवश्य मिलाना चाहिये। विज्ञानवाद क्या आया है बिचारे मूक निरपराध जानवरों की तो पूरी आफत ही आगई है। इसके कारण उनकी और उनके बच्चों की वृद्धि मारी गई है। भारत में सूत कातने और बुनने वाली ६५० के लगभग मिलें हैं। कुछ मिलें ऐसी हैं जिनके मालिक दयालु होने के कारण अपने मिल द्वारा तैयार होने वाले सूत एवं कपड़े पर चर्बी नहीं लगाते, ऐसे मिलों की संख्या अंगुलियर गिनने लायक है। अन्य समस्त मिलों में चर्बी का खूब उपयोग होता है।

साबुन, मोमबत्ती, मोम इत्यादि अनेक वस्तुएं हैं जिनमें लाखों मन वार्षिक चर्बी खर्च होती है। सबसे भयकर बात तो यह है कि इस चर्बी का व्यवहार हमारे भोजन के पदार्थों

में भी होने लगा है। हज़ारों मन चर्बी घी में मिश्रित होकर अपने को उच्च मानने वाले ब्राह्मणों से लेकर छूत-अछूत शूद्रों तक के पेट में पहुंच चुकी है। शहरों में शुद्ध घी मिल जाना बड़ा सौभाग्य है। शहरों के जैन घी के व्यापारी भी निःसकोच घी में चर्बी मिलाते हैं और चर्बी मिश्रित घी बेचते हैं।

इत्यादि अनेक काम बढ़ गये हैं। जिनके लिये चर्बी की अनिवार्य आवश्यकता पड़ती है। जब तक ये काम चालू रहेंगे तब तक चर्बी की ज़रूरत होती ही रहेगी और चर्बी के लिये पशुवध भी होता ही रहेगा।

(५) पशुवध का एक और उत्तेजक कारण हड्डियों का व्यापार है। इस अभागे देश से प्रतिवर्ष ३५—४० लाख मन हड्डियां परदेश भेजी जाती हैं। इन निरपराध मूक पशुओं की हड्डियों से हमारे फैशन की पूर्ति के लिये तरह २ के बटन, ब्रूचस, हुक, कंघिया, कंघे चूड़ियाँ आदि वस्तुएं बनाई जाती हैं। इनके सिवाय विदेशी शक्कर की शुद्धि में हड्डियों का चूर्ण डाला जाता है। देखिये इन वर्षों में इस प्रकार हड्डियां बाहर भेजी गईं:—

सन् १९०९×१० ५४०१६४२ रु०
,, १९१०×११ ७४२५४०७ ,,
,, १९११+१२ ६१७६१३५ ,,

(Review of trade of India

(६) [illegible] —मृत पशुओं

भी यहां कम व्यापार नहीं होता है। इसमें सन्देह नहीं है कि सींगों की प्राप्ति के उद्देश्य से यहा पशुवध नहीं होता है फिरभी सींग के वृद्धिगत व्यापार और सींग की बनी हुई वस्तुओं के प्रचार बाहुल्य के कारण पशुवध को परोक्ष रीति से उत्तेजन पहुँचता है। सामान्य तौर पर इससे कघी, ब्रुचेस, पिन, फ्रेम इत्यादि बनने के उपरान्त युद्ध की कई एक सामग्रियों के तैयार करने में सींग की आवश्यकता बहुत बढ़ गई है। यहा से निम्न लिखित वर्षों में इस प्रकार सींग निर्यात हुआ था:—

सन्	१९०९×१०	५९३८३६६ रु०
"	१९१०×११	२३४५०४३ "
"	१९११×१२	२७६३०८५ "

(Review of trade of india)

(७) गीले खून का व्यापार—यहां पर मूक जानवरों के गीले खून का व्यापार भी लाखों का ही होता है। विलायती रंगों और दवाइयों में पड़ने के लिये यहां से हजारों गेलन ताज़ा खून प्रतिवर्ष पाश्चात्य देशों को जाता है। यहां इस खून से पक्के कच्चे लाल रंग ताकत की दवाइयां, खून शुद्ध करने की दवाइयां इत्यादि बनाई जाती हैं। आप भूल न जाइये कि चेचक के भय से आप अपने प्यारे बच्चे को जो टीका (Vaccination) लगवाते हैं उस दवा को तैयार करने में हमारी एक गोमाता का वध होता है। आज एक टीका

लगवाना कानूनन जारी है इसलिये कहना पड़ता है कि उस दवा की प्राप्ति के लिये दूध रूप अमृत देने वाली लाखों गौओं का वध कानूनन जारी है। गौ के खून के सिवाय टीका की दवाई और पशु के खून से तैयार नहीं हो सकती इसलिये खास इसी दवा को तैयार करने के लिये देश विदेश में लाखों करोड़ों गायों का रक्त शोषण होता है।

दुःख की बात तो यह है कि इस टीका के लगवाने पर भी चेचक निकल ही आती है। जिस रोग की प्रशान्ति के लिये इसका प्रयोग किया जाता था वहां आज प्रायः असफलता ही दिखाई देती है। देश विदेश के बड़े बड़े प्रकांड डाक्टरों ने इस दवाई के विरुद्ध फतवे निकाले हैं परन्तु फिर भी इस धर्मप्राण किन्तु पराधीन भारत में तो टीका लगवाना कानूनन जायज़ है इसलिये रूपान्तर से गोवध भी कानूनन जारी है ऐसा समझने में कोई भूल नहीं है। गौभक्त भारतवासियों और खास करके अहिंसा प्रधानी जैनों, वैष्णवों और सनातन धर्मावलम्बी जनता को तो इस दवा का जोरों के साथ विरोध करना चाहिये।

टीका लगाने को ही एक ऐसी दवा नहीं है जिसमें पशु के खून की जरूरत पड़ती है परन्तु ताकत, खून शुद्धि आदि अनेक प्रकार की दवाइयां हैं जिनमें खून की अनिवार्य आव श्यकता है। वैसे तो इन दवाइयों से यथेष्ट लाभ नहीं होता और थोड़ी देर के लिये यह मान भी लीजिये कि इनसे लाभ

होता भी है तो यह कितनी बड़ी मिथ्यास्वार्थपरता है कि मनुष्य अपने तुच्छ भले के लिये एक जीवित पशु को बलिदान करदे। अस्तु ! इसमें सन्देह नहीं है कि इस व्यापार के निमित्त भी हमारी हजारों गायों का वध होता है।

[७] पशुवध का अनिवार्य कारण इस पराधीन भारत में एक और भी है। और वह है गोरी फौजों की खुराक के लिये गोमास देने का। सन् १६२५ में भारतवर्ष में १ लाख से ज़्यादा गोरी फौज के सिपाही, अमलदार और राज्यशासन विभाग के सिविलियन थे। उन सबका मुख्य भोजन है गोमांस। इसके बिना उनका पेट नहीं भरता। प्राय इन अधिकारियों की खुराक [Ration] देने के लिये सरकार प्रतिज्ञाबद्ध रहती है। कमसे कम एक गोरा एक दिन में १ सेर मास तो खायगा ही इस तरह से उन सबके लिये सरकार को कमसे कम १००००० सेर [२५०० मन] गोमांस प्रतिदिन देना ही चाहिये। इस तरह वर्ष में ९१२५०० मन गोमांस चाहिये जिसके लिए सरकार को कमसे कम १८२५००० गायें तो अवश्य ही कटानी पड़ती है। ईद के त्यौहार पर एक दो गायों को मार डालने वाले मुसलमानों को जो हिन्दू अपना दुश्मन एव धर्म-द्रोही समझते हैं वही वर्ष में १८। लाख गाय को नियमित रीति से काट डालने वाली सरकार को अपना हितैषी कैसे समझते रहते हैं ? जिस एक गोवध के ऊपर जगह २ हिन्दू मुस्लिम झगड़े खड़े हो जाते हैं वहां प्रतिदिन सरकार द्वारा होने वाले ५०००

गायों के वधपर आज एक भी हिन्दू झगड़ा नहीं करता है। प्रात: ५ बजे जब हम अपनी सुख-शय्या का त्याग कर उठते हैं उसके पहिले २ भारत की अमूल्य निधि और हिन्दू धर्म की १००० गोमाताएँ कसाइयों की ज़ालिम छुरियों के नीचे हलाल की हुई अन्तिम श्वांसों के कारण छटपटाती रहती हैं। रात भर भरी नींद सोने वाले हिन्दुओं को गोमाताओं के उस छटपटाने का दृश्य कैसे याद आ सकता है? यदि इस बात का सजीव नकशा देखना है तो एक बार कुरला और बान्द्रा के सरकारी कसाईखानों की तरफ़ आकर देखो। कम्पा उण्ड के बाहर १००-१५० गज़ की दूरी से ही उन कटती हुई गायों के अन्तर्वेधी आर्तनाद और अन्दर काम करनेवाले कसा इयों के कोलाहल को सुनकर हृदय थोड़ी देर के लिये स्तब्ध एवं निष्क्रिय सा बन जाता है। सैकड़ों कामधेनु सरीखी मोटी ताज़ी गायें यहाँ बड़ी नृशंसतापूर्ण रीति से अपना अन्त देखती हैं। कहना व्यर्थ है कि सरकार की इस दुर्नीति से यहाँ का पशु-धन बड़ी शीघ्रता से घटता जा रहा है।

(८) सामान्य भोजन निमित्त—इसके सिवाय ७ करोड़ मुसलमान, १ करोड़ ईसाई और ४-५ करोड़ निम्न श्रेणी भी ऐसे हैं जिनके भोजन का मुख्य भाग मांस है। गोमांस की अपेक्षा बकरे बकरी का मांस अधिक खर्चीला होता है,-साधा रण स्थिति का मनुष्य वर्ष भर उसे मोल नहीं ले

इसलिए ये भी सस्ते गोमास पर ही अपने दिन बिताते हैं। इस अहिंसा प्रधान भारत में आज १७-१८ करोड़ से अधिक मनुष्य मांस-भोजी हैं और उनके निमित्त भी प्रतिदिन हजारों गौओं एवं गौवंश की हत्या की जाती है।

ये आठ कारण तो हुए ऐसे—जिनके कारण अनिवार्य रूप से गोवध किया जाता है फिर आपही सोचिये कि भारत का पशुधन क्यों न घटता जाय ? सभी तरह से उसके क्षय के उपाय किये जाते हैं, वृद्धि के नहीं। फिर भारत का पशुधन कम एवं निर्बल हो जाय, कृषि योग्य वाले पशु मिले नहीं और जो मिलें भी वे सर्वथा अयोग्य हीन क्षीन निर्बल मिलें—दूध घी आदि गोरस शुद्ध न मिलें और सो भी अपवित्र होकर ऊंचे भाव से मिलें ये सब बातें स्वय सिद्ध हैं।

इसके सिवाय दुर्भिक्ष, भारतकी निर्धनता, अच्छे पशुओं की कमी, अच्छे सांडों की कमी, गोपालन शिक्षा का अभाव, दूध देने वाले पशुओं पर अत्याचार करके बांझ बना देना, गोचर भूमि का अभाव, विलायती देशों से जमे हुए दूध, मक्खन, वेजीटेबल घी आदि का आना आदि २ अनेक कारण हैं जिनके कारण यहां का पशुधन बड़ी शीघ्रता से घटता जाता है। उनकी उपयोगिता कम होती जाती है और इसलिये उनका वध बढ़ता जाता है।

इन सबका ऊपर संक्षिप्त वर्णन करने की आवश्यकता इस
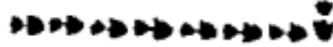
लिये पड़ी कि पहिले यह जानना ज़रूरी है कि किन २ कारणों से यह हिंसा फैली हुई है। उनके मूल कारणों को जान लेने पर ही अहिंसा प्रचारक कार्यों अथवा पशुरक्षक संस्थाओं के उद्देश्यों के ऊपर विचार किया जा सकता है। पशुवर्ग पर होने वाले अत्याचारों की विविधता एवं उनके मूल कारणों पर अच्छी तरह विचार कर जो संस्था उनकी सुरक्षा का उपाय करेगी वही सफल होगी और उसी में दिया हुआ द्रव्य सदुपयोगी बनेगा और उसीसे वस्तुतः दया धर्म के अङ्ग की पूर्ति होगी। ऐसी संस्था के निम्न लिखित मुख्य कर्तव्य होने चाहियेः—

(१) मैं पहिले ही लिख चुका हूँ कि यहां पर हिन्दू, मुसलमान आदि समस्त भारतीय सम्प्रदायों में धर्म के नाम पर कम से कम १०—१२ लाख से ज्यादा पशु बलिदान किये जाते हैं। इस तरह बलिदान देना न तो धर्म का रूप ही है और न उससे कुछ लाभ ही है। भ्रम एवं अन्धश्रद्धा में जकड़े हुए मनुष्य केवल अपनी परम्परागत रूढ़ि के वशवर्ती होकर ही बलिदान करते हैं और पुण्यबन्ध समझते हैं। यह समझ ही आज लाखों मूक पशुओं के नाश का कारण हो रही है। इसलिये ऐसी संस्था का प्रथम कर्तव्य तो यह होगा कि वह स्थान २ पर अपने उपदेशक भेजकर अहिंसामय वातावरण फैलावे। बलि देने वाले अन्ध श्रद्धालु जनता को समझावे कि देखो भाइयो! इस तरह बलिदान देने से न तो परमात्मा ही

प्रसन्न होते हैं और न पुण्य ही। इसलिये इन मूक जानवरों पर छुरी मत चलाओ। इन विचारों में भी तुम्हारी जैसी जान है इसलिये इन्हें मारने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं है। इस तरह हिन्दू उपदेशक हिन्दू समाज में, मुसलमान उपदेशक मुस्लिम समाज में एक दो बार नहीं किन्तु सैकड़ों हजारों बार जाकर बड़े प्रेम भाव से वास्तविक बलिदान का अर्थ समझायें। ये उपदेशक ऐसे प्रशस्त पंडित तो अवश्य हों कि जो हिन्दू समाज में हिन्दू शास्त्रों से और मुसलमानों में कुरान शरीफ की आयतों से यह सिद्ध कर बतायें कि ऐसी हिंसा करना इन दोनों धर्मों के विरुद्ध है। पशु रक्षक संस्था का यह उपदेशक विभाग सबसे अधिक ज़रूरी है। इसके द्वारा ही य प्रतिवर्ष होने वाले लाखों जीवों के पशुवध को रोक सकेंगे। जो हिंसा निरोध एव अहिंसा का प्रचार विविध प्रकार से ज़बर्दस्ती अथवा सख्तिया करने से सफल नहीं हो सकता, वही सुदृढ़ अहिंसामय वातावरण के चारों तरफ फैल जाने से स्वय सिद्ध हो जायगा। सख्तियों द्वारा जो हिंसा रोकी जा यगी वह तो वर्ष दो वर्ष पीछे पुन: उससे भी बड़े रूप में उठ खड़ी होगी परन्तु जो हिंसा हिंसकों के अहिंसक हृदय परिवर्तन के साथ होगी वह स्थायी होगी और वस्तुतः उसीसे अहिंसा के ध्येय की पूर्ति समझी जा सकती है। इसलिये ऐसी संस्था के लिये सबसे प्रथम यह आवश्यक है कि वह ऐसे प्रभावशाली उपदेशकों द्वारा बलिदान देने वाली जातियों में

अहिंसामय वातावरण फैलावे। नवदुर्गा एवं दशहरा के दिनों में प्रत्येक हिन्दू तीर्थ पर ऐसी सभाओं के उपदेशक आ आकर भोली जनता को अहिंसा का उपदेश सुनावें। जीव सिद्धि कर उन्हें समझावें कि ऐसी हिंसा करना हिन्दू शास्त्रों के विरुद्ध है। ऐसे निरपराध पशुओं की हिंसा करने से पूर्वजों का प्रकोप तुम पर उतरेगा। वे इस हिंसा से प्रसन्न नहीं हैं इत्यादि समस्त विषयों को हिन्दू शास्त्रों के प्रमाणों से समझावें और जीव दया के ट्रैक्ट बांटें। जगह जगह ऐसी जीव रक्षक संस्थाओं की शाखा—प्रतिशाखाएं खोली जाय। जनता को हिंसा का पाठ देने के उपरान्त बलिकर्म करने वाले ब्राह्मण पंडों को भी साम और दाम नीति से अहिंसा के पक्ष में लिया जाय। उन्हें बताया जाय कि तुमने उच्चतम ब्राह्मण कुल में जन्म लिया है। तुम्हारे पूर्वज किसी अन्य जीव को अपने मन, वचन और काय से भी क्षति नहीं पहुँचाते थे। वे स्वयं अहिंसक थे और दूसरों को अहिंसा का ही उपदेश देते थे इसलिये वे प्राचीन ब्राह्मण समस्त मनुष्यों के वंद्य होते थे आज उन्हीं की सन्तान तुम लोग केवल दो पैसे के लाभ में अपने शुद्ध कर्तव्य से कितनी दूर आ पहुँचे हो! यह निंद्य व्यवसाय आप लोगों के उच्च कुल के लिये शोभास्पद नहीं है इत्यादि प्रकार से उन्हें भी अहिंसक पक्ष में सम्मिलित किया जाय। उनसे लिखित प्रतिज्ञा कराई जाय कि वे अपने हाथ से ऐसा नीच कर्तव्य कभी न करेंगे। यद्यपि इस तरह से वृत्ति

नाश के भय से समस्त पण्डों का अहिंसक होना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है परन्तु साथ ही यह भी याद रखना चाहिये कि जब तक इन पण्डों को अहिंसक नहीं बनाया जायगा तब तक अहिंसा का वातावरण भली प्रकार फैल नहीं सकता। इसलिये इनको समझाकर और अपने पक्ष में लाना और भी आवश्यक बात है। यदि हरेक तीर्थ पर १०-२० पण्डे भी अहिंसक बन जांय तो उनकी एक एक कमेटी बनादी जाय, वे अपनी आजीविका का कोई एक वैध उपाय ढूंढ निकाले। जैसे कि वे सामान्य बलि भेंट देने वाले से केवल एक नारियल और १-२ पैसे की दक्षिणा (जैसा वे उचित समझें) लेन की व्यवस्था रक्खें और यदि कोई कट्टर आदमी जीव हिंसा पर ही तुला हो तो उसके लिये व कमस कम १०) रु० या ऐसी कोई भारी रकम रक्खें। इस पौलिसी से पण्डों की आमदनी में भी वृद्धि होगी और अहिंसा का प्रचार भी होगा। यदि यह पौलिसी सब जगह काम में लाई जाय तो फाई भी पण्डा आम दना घटने के कारण से इसका विरोध नहीं करेगा। इत्यादि सब कार्यों की व्यवस्था जीवरक्षक समाओं के उपदेशक ही कर सकते हैं।

(२) ऐसी जीव रक्षक समाओं का दूसरा कर्तव्य विविध विविध भाषाओं में अहिंसा विषयक ट्रेक्ट छपवा कर वितरण करने का है। सब स्थानों पर सब दर्शों में स्वय जाकर अहिंसा का प्रचार करना बड़ा खर्चालू होने के साथ २ कठिन भी है।

ट्रेक्ट वितरण का काम सस्ता एवं व्यापक है। इसलिये जहां उपदेशक न जा सकें वहां २ सर्वत्र ही जीवरक्षा के ऊपर ट्रेक्ट वितरण कर अहिंसामय वातावरण पैदा किया जाय।

(३) कई समाजों में धर्म के नाम पर पशुदान किया जाता है परन्तु अन्त में उस पशुको कसाई के यहा आकर कटना पड़ता है इसके भी दो उदाहरण यहा देता हूँ—

(१) हिन्दू शास्त्रों में नवदुर्गा के त्यौहारों में पितृऋण से मुक्त होने के लिये बहुत से समर्थ हिन्दू कम से कम एक एक गाय (वैसे तो बहुतसे ५-१० और ५० तक भी) ब्राह्मणों को देते हैं। इस तरह इन दिनों में एक एक ब्राह्मण को कभी २ तो २०-४० तक गायें मिल जाती हैं। भक्त जनता तो ब्राह्मण देवता को गौ अर्पण करके अपने को कृतकृत्य समझ लेती है परन्तु यह नहीं देखती कि इन २०-२५ गायों को चराने का इस ब्राह्मण देवता के पास भी कोई साधन है या नहीं? कहना व्यर्थ है कि ऐसे ब्राह्मणों के पास गौओं के निर्वाह योग्य कोई साधन न होने से उन गौओं की ठीक २ रक्षा नही होती; न तो उन्हें भरपेट चारा ही मिलता है और न उनकी तरफ यथेष्ट ध्यान ही दिया जा सकता है गरीब ब्राह्मण जब अपना और अपने बाल-बच्चों का ही पेट नही भर सकता है तो फिर इन पशुओं का पेट भरे तो कैसे? फिर भी यथासाध्य कष्टों को उठाकर गोपालन करने वाले ब्राह्मणों को तो भी धन्य

वाद है परन्तु आजकल पशु-पालन की झंझट में कोई नहीं पड़ता। जितनी गायें उन्हें दक्षिणा में मिलती हैं उन्हें व तुरत बेचकर दाम खड़ा कर लेते हैं। इस तरह से मिली हुई गायें अपेक्षाकृत बहुत सस्ते भाव से बेची जाती हैं क्योंकि उनमें ब्राह्मण देवता का तो कुछ खर्च होता ही नहा है। उन्हें तो मुफ्त में मिलती हैं इसलिये ऊंचे नीचे भाव पर भी गौ बेचते हुए उन्हें संकोच नहीं होता। प्रति वष गगाजी के किनारों पर बीसियों ऐसे ही धार्मिक मेले भरते हैं यहा हजारों लाखों गायों का दान ब्राह्मणों को होता है जिनका परिणाम यह होता है उन दी हुई गायों का बहुत कसाइयों के हाथ बिकता ह और सो भी बड़े स्वल्प मूल्य में।

(११) जैनियों में पर्यूषण पर्व के दिन बड़े पवित्र समझे जाते हैं। इन दिनों में बहुतसे जैनी हिंसा के भय स अपने व्यापारादि आरम्भों को भी नहीं करते हैं। पर्यूषण पर्व क अन्तिम दिन कुछ पशुओं को अमरिया कर देने का रिवाज बहुत प्रचलित है। इसमें सन्देह नही कि जिस दृष्टि से जैनी लोग पशुओं को अभयदान देते ह उसमें जीव रक्षा की उत्कृष्ट भावना का ही मुख्य उद्देश्य होता है परन्तु जिस विधि स यह अमरिया करने की रूढ़ि पड़ी है उससे तो जीव रक्षा नहीं होती प्रत्युत हिंसा को उत्तेजन मिलता है। देखिये यह कैसे?

यद्यपि दया—धर्म पालन करने क लिये वर्ष भर १२ दा

महीने पर ३६० ही दिन समान हैं फिर भी [(ऐसी रूढ़ि पड़ गई है)

(॥) पर्यूषण पर्व ही जैनियों के लिये अमरिया करने का एक खास अवसर माना जाता है। इन दिनों में जैन यथाशक्य सभी प्रकार की हिंसा रोकने का प्रयत्न करते हैं। वे कसाइयों से पशु, चिड़ीमारों से पक्षी, मच्छीमारों से मछलियां छुड़वाते हैं और तो क्या भड़भूजों के भाड़, खटीक, चमारों की दुकानें आदि भी बन्द रखाते हैं। कहीं २ स्वेच्छा से भी बन्द रखते हैं। इस बन्द रखाई के लिये उन्हें उनकी प्रायः मुंह मांगा दाम देना पड़ता है। इस तरह दान देना जैनियों का कर्तव्य और उन लोगों की एक वृत्ति सी बन गई है। फल यह होता है कि जो मच्छीमार महीने में शायद २—४ बार ही मछली पकड़ने जाते हैं वे जैनियों से दाम गांठने के लिये पर्यूषण के पर्वों में तो जरूर ही मच्छी मारने जाते हैं। मच्छी मारने से शायद उन्हें ४ ६ आने का ही लाभ होता परन्तु पर्यूषण पर्व में तो मछली न मारने की प्रतिज्ञा के लिये उन्हें ४-५ और कभी २ तो १०—१५--० रु० तक मिलते हैं फिर इस प्रत्यक्ष लाभदायक व्यापार से ये लोग क्यों बचें ? जैनियों के पर्यूषण तो उनके लिये कमाई के दिन हैं फिर इन दिनों में वे स्वभाव शुद्ध होकर अहिंसक बनने की मूर्खता कैसे कर सकते हैं ?

यह तो है हिंसा उत्तेजन का पहिला प्रकरण। यहां से हिंसा का दूसरा प्रकरण शुरू होता है। उदाहरण के

तौर पर समझ लीजिये कि पर्यूषण के दिनों में एक स्थान में १० बकरे (कभी २ बछड़े बछियां और गायें) अमरिये किये गये। कसाई तो मुंह मांगे दाम लेकर अपना रास्ता नापता है। ये बकरे या तो यौंही छोड़ दिये जाते हैं या ऐसी गौशालाओं में अधिकारियों की अनिच्छा पूर्वक ठेल दिये जाते हैं जहां पहिले दुधारू जानवर ही भर पेट खुराक न मिलने से मौत की राह देखते पड़े रहते हैं। पहिली अवस्था में उनपर न तो किसी की मालिकी ही रहती है और न उनकी रक्षार्थ कुछ प्रबन्ध ही होता है। बिना आहार पानी के ये अमरिया किये हुये पशु यौंही भूखे प्यासे फिरते रहते हैं। वैसे तो ये अमरिया कहलाते हैं परन्तु असली बात तो यह है कि इन पर मांस-भक्षी मुसलमान, चमार, खटीक आदिकों की क्रूर दृष्टियां सदैव लगी रहती हैं। जहां मौका मिला कि १-२ को पकड़ लिया और घर के ही अन्दर २ चटपट कर हजम कर गये। ये अमरिये पशु किसी की निजी सम्पत्ति नहीं रहते इसलिये इन लावारिस पशुओं को खा जाने वालों पर कोई कानूनी कारवाई नहीं की जा सकती। प्रतिवर्ष सैकड़ों पशु अमरिया होते हैं, कुछ थोड़े दिनों तक तो वे इधर उधर टहलते हुए दिखाई देते हैं किन्तु महीने दो महीने के अन्दर ही वे सब लोप होजाते हैं। जैनी लोग कुछ थोड़े से रुपयों के लिये मन ही यह मानलें कि हमने इतने पशु अमरिया कराकर बड़ा पुण्य संचय किया है परन्तु वस्तुतः उन जीवों की ना कोई रक्षा

नहीं होती। एक तरह-यह समझ लेना चाहिये कि पहिले तो कसाइयों को पशु लाने के लिये दाम देने पड़ते परन्तु इस दशा में तो उन्हें मुफ्त में ही पशु मिल जाते हैं।

बहुतसी जगह इन अमरिया पशुओं को गौशाला आदि संस्थाओं में भेज दिया जाता है। परन्तु इन गौशालाओं की स्थिति भी हमेशा दुर्बल एवं दयनीय ही होती है। वे इन पशुओं का पालन मुश्किल से भी नहीं कर पाती। जैनी लोग अमरिया करना तो जानते हैं परन्तु उन अमरिया जीवों के लिये भविष्य का प्रबन्ध कुछ नहीं करते। इन गौशालाओं में वे यथेष्ट सहयोग एवं सहायता नहीं देते। फल यह होता है कि वे पशु भर पेट आहार पानी के बिना वहां घुट घुट कर मरते हैं। किसी भी तरह से सोचिये—अहिंसा एवं जीव रक्षा का जो पवित्र उद्देश्य था उसकी एकांश भी इस तरह अमरिया करने से सिद्ध नहीं होती।

(iii) यहां प्रयाग, हरिद्वार, सोरों आदि गंगाजी के किनारे के नगरों में वर्ष में कम से कम एक या दो प्रसंग भी ऐसे आते हैं कि जब गंगा स्नानार्थ प्रत्येक प्रान्त से हज़ारों नर नारी यहां आकर एकत्र होते हैं और लक्खी मेला भरता है। हिन्दुओं में गंगा स्नान कर गौ दान बड़ा भारी पुण्य का कारण माना गया है इसलिये इन धार्मिक मेलों के अवसर पर समृद्ध लोग हज़ारों पशुओं का दान करते हैं। पशुओं में गौ प्रधानता से दी जाती है। इधर-कई जगह इन्हीं दिनों में सरकार की तरफ़-

से पशुओं को क्रय विक्रय करने का मेला भरता है। इन दिनों में यहुत से कसाई तिलक, चन्दन, जनेऊ आदि पहिने हुए मेलों में आ शामिल होते हैं। लोग उन्हें ब्राह्मण समझ कर दान पुण्य करते हैं परन्तु वस्तुतः उनको भी गई गायों की भाग्य होने के सिवाय और कोई गति नहीं होती।

(IV) सरकार द्वारा लगाये हुये पशुओं के मेलों का यद्यपि बड़ा उत्तम उद्देश्य था। इससे, अच्छे पशु और उनकी नस्ल की वृद्धि होती थी, एक प्रान्त के अच्छी नस्ल के पशु दूसरे प्रान्त में आते और अच्छी नस्ल के पशुओं की संख्या-वृद्धि करते थे और कृषि योग्य पशुओं को पैदा करते थे, परन्तु भारत की पराधीनता एवं ऊपर से कुमित्रों की भरमार से इन मेलों से सिवाय पशुओं के ह्रास के और कोई लाभ नहीं होता। पटश्वर, मेरठ सरीखे देश में तो क्या-प्रत्यक प्रान्त में ऐसे बड़े बड़े पशुओं के मेले भरते हैं जिनमें हाथी से लेकर सूअर तक जानवर लाखों की संख्या में क्रय विक्रयार्थ आते हैं। कहते हुए बड़ा दुःख होता है कि ऐसे मेलोंसे केवल कसाइयों को सस्ते से सस्ते दामों में अधिक से अधिक पशु मिलते हैं। सरकार अपनी गोरी पल्टनों के लिये जो प्रति दिन ४००० पशु कटवाती है उनको अधिकांश इन्हीं मेलों में से खरीदा जाता है।

(५) पशुओं के मेलों से होनेवाली हानियों का मैंने यहां आपको सक्षेप दिग्दर्शन कराया है। इन मेलों को तोड़ने के

दो ही उपाय हैं एक तो यह—कि स्वयं सरकार ही ऐसे मेलों को नाजायज़ करार देवे। दूसरा यह, कि जहां जहां मेले भरते हों वहां की म्युनिसपैलिटियां और डिस्ट्रिक्ट लोकलबोर्ड उन्हें खास तौरपर नाजायज़ करार करें। पशुरक्षक मण्डलियों को दोनों ही उपाय करने चाहिये। परन्तु सरकार से ऐसा नियम पास करा लेना हँसी ठट्ठा नहीं है। सरकार महा चालाक है, वह ऐसे मेलों से पशुओं की उन्नति के गीत गायेगी, नये-मय वहाने बतायेगी। वह तो वस्तुतः ऐसा क़ानून बना नहीं सकती, क्योंकि उसे तो अपनी गोरी फौज के लिये कम से कम ५००० जानवर प्रतिदिन चाहिये। ऐसी दशा में सरकार से तो सर्वांशिक आशा रखना बेकार है फिर भी आंशिक सफलता मिलना असम्भव नहीं है। बने जहां तक, ऐसे मेलों को बन्द करने के लिये सरकार की तरफ से कुछ हद तक क़ानून बनाये जा सकते हैं, और ऐसे मेलों की संख्या घटाई जा सकती है।

(५) हां, यदि म्युनिसपैलिटी आदि द्वारा ऐसे मेले बहुत अंशों में बन्द किये जा सकते हैं। यदि पशुरक्षक समितियां इनका आश्रय लेवें तो बहुत कुछ सफलता मिल सकती है। इसके अलावा गौदान और अमरिये किये जाने की प्रथाओं को मानने वाली हिन्दू एवं जैन समाजों को व्याख्यानों, ट्रैक्टों एव पेम्फ्लेटों द्वारा ज्ञात कराया जाय और इस बात की कोशिश की जाय कि ये प्रथायें बिलकुल बन्द हो जांय। यहां

यह आशय नहीं है कि गौदानें और अमरियों की प्रथा हमेशा के लिये उठा दी जाय—अथवा उन्हें कोई कैसे भी संयोगों में काम में न लावे, परन्तु आशय यही है कि जो ब्राह्मण स्वय अपना पोषण न कर सकता हो—वह भला गौ का पालन क्या रेगा इसलिये उसे गौदान न किया जाय। इसी तरह जो जैनी बन्धु किसी जीव को अमरिया करके उसे पशुशाला में न भेज सकें या ऐसे अमरिया पशुओंका निर्वाह न कर सकें तो ये अमरिया करने की प्रथा बन्द कर दें यही उचित है। देखा-देखी इन प्रथाओं को चालू रखने से जीव रक्षा के बहाने हिंसा कैसे बढ़ती है-इसका उदाहरण तो मैंने ऊपर स्पष्ट लिखा ही है।

(६) पशुरक्षक समितियों के लिये एक और महत्व-पूर्ण कर्त्तव्य है। यदि ये वस्तुतः पशुहिंसा रोकने के लिये ही स्थापित हुई है तो वे सबसे प्रथम देशी रियासतों में जीव हिंसा बन्द करावें। ब्रिटिश भारत की सरकार तो परदेशी है और साथ ही साथ विधर्मी भी है उसके यहां हिंसा पाप नहीं है और वस्तुतः वह यह भी नहीं चाहती है कि भारतवर्ष की उन्नति हो इसलिये वह पशुरक्षा के लिये कोई प्रबन्ध भी नहीं करेगी। परन्तु देशी स्टेटों में उनकी जीव रक्षा का मिशन भली प्रकार सफल हो सकता है। प्रथम तो तमाम देशी राजे महाराजे मुख्यतया हिन्दू हैं, दूसरे वे पशुओं में जीव मानते हैं और तीसरे अपनी स्टेट की उन्नति के लिये पशुओं की अनिवार्य आवश्यकता भी समझते हैं ऐसी परिस्थिति में यदि ये जीव

रक्षक समितियां हरएक-देशी स्टेट की सेवामें अपने डेप्युटेशन भेज कर दया के लिये स्टेट भर में पशुवध न करने का फरमान निकलवा लें,-तो स्टेटों में होने वाली लाखों पशुओं की रक्षा सहज ही में हो जाय।

(७) वस्तुतः सर्वथा जीव हिंसा का फैलाना तो तब तक असाध्य है, कि जब तक समस्त देश में अहिंसा का पूर्ण बलवान वातावरण न हो। ऐसा बलवान वातावरण बना लेना असम्भव है इसलिये सर्वथा पशुहिंसा का रोक देना भी असम्भव है, परन्तु आजकी सी हिंसा की भीषण मात्रा कम जरूर की जा सकती है और खास कर चमड़े, जमे और सूखे खून, गोरी फौस, चर्बी हड्डी, सींग आदि व्यापारों के लिये होने वाली हिंसा तो देश की आर्थिक समुन्नति की दृष्टि से अवश्य ही कम की जा सकती है। ऐसी पशुरक्षक समितियों का यह कर्तव्य हो कि, वे इस विषय की बड़ी धारा सभा के मेम्बरों का ध्यान इधर खींचें और वैसा प्रस्ताव पास कराने के लिये वे सरकार को बाध्य करें।

उपर्युक्त सात उपाय तो हुए प्रचार के। इसके अलावा कुछ ऐसे रचनात्मक कार्य भी हैं जो इन संस्थाओं के लिये जीवरक्षा के मार्ग में बहुमूल्य एवं अत्युपयोगी हैं। मैं पहिले अनेक जगह लिख चुका हूं कि, पशु रक्षा का प्रश्न आर्थिकदृष्टि से सुलझाना चाहिये। वस्तुतः यह तो संसार का नियम है, कि निर्बलों को दुनियां में रहने को जगह नहीं है और सर्वत्र

ही हम Might is right का दौर दौरा देखते हैं। पशु भी मनुष्य की अपेक्षा निर्बल हैं इसलिये इस दृष्टि से तो वे हमेशा ही मनुष्यों के अत्याचार सहन करते रहेंगे और उन्हें मानव समाज की लालसा पूर्ति के लिये मरना भी पड़ेगा, परन्तु उनकी रक्षा का एक मात्र केवल यही उपाय है कि उनकी रक्षा को आर्थिक दृष्टि से महत्व दिया जाय। यह दृष्टि ही एक ऐसा कारण है जिससे पशु रक्षा करना प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य सा हो जाता है।

ऐसी संस्थाएं जीव रक्षा के लिये दो मार्ग रक्खें। (१) व्यापारिक और (२) सवृद्धि। व्यापारिक दृष्टि रखने का कारण यह है कि इससे पशु पालन की अनिवार्य आवश्यकता होगी और दूसरे—इससे आर्थिक लाभ होगा। यहां सबको यह भी ध्यान रखना चाहिये कि, पशु हिंसा बढ़ने का एकतम मुख्य कारण यह भी है कि पशुओं की उपयोगिता पहिले से बहुत कम हो गई है और जो वस्तु निरुपयोगी होती है वह तो नष्ट की ही जाती है इसमें सन्देह नहीं है। पशु रक्षा को व्यापारिक दृष्टि से करने से सबसे बड़ा लाभ तो यही होगा कि, इससे पशुपालन की अनिवार्य आवश्यकता बढ़ेगी और फिर उससे दूर आशय "संवृद्धि" की भी पूर्ति की जा सकेगी।

"संवृद्धि" का अर्थ अच्छे पशुओं की वृद्धि करना है। सवृद्धि का नियम (Problem) पशुरक्षा के लिये एकतम आवश्यक है। मैं आपको इसको उदाहरण द्वारा समझाना चाहता हूँ।

जिस तरह मनुष्यों में कुलीन और नीच ये दो भेद हैं वेही दो भेद पशुओं में भी मौजूद हैं। कुलीन पशुओं के वैसे तो अनेक गुण हैं और उनके परीक्षक उन सबको भली भांति जानते हैं, परन्तु उनमें से भी मुख्य दो गुण विशेष उल्लेख्य हैं। कुलीन गाय या भैंस प्रथम तो दूध अधिक देती है और कम खाती है। दूसरे—वह देखने में सुन्दर होती है और उसकी बछियां उससे भी अधिक दूध देने वाली एवं सुन्दर होती हैं। नीच कुल के पशुओं का हाल इससे ठीक विपरीत है। ऐसी भैंसें या गायें ज्यादा तो खाती हैं परन्तु दूध कम देती हैं और सामान्य तौर पर उनकी सन्तान भी नीच ही होती हैं और वह मानव समाज के लिये कम उपयोगी होती है। इसलिये सबसे अधिक आवश्यक तो यह है कि जहां इस प्रश्न को व्यापारिक दृष्टि से सुलझाया जावे वहाँ इस बात का सब से अधिक ध्यान रक्खा जाय कि कुलीन पशुओं को ज्यादा पाला जाय। नीच जाति के पशुओं को पालने की अपेक्षा उच्च जाति के पशु को पालने में कितना लाभ है इसका उदाहरण निम्न प्रकार है:—

बम्बई नगर की जनसंख्या १४ लाख है। प्रतिदिन १-१ मनुष्य के औसतन कम से कम पाव भर दूध तो चाहिये ही। इस तरह प्रतिदिन के खर्च के लिये यहां ८७५० मन दूध तो जरूर ही चाहिये। एक अच्छी भैंस औसतन दिन भर में १-५ १६ सेर दूध दे सकती है और मामूली भैंस आठ दस सेर दूध

दे सकती है। इस तरह बम्बई के लिये दूध की मांग पूर्ति करने के लिये कम से कम अच्छी नस्ल की २१८७५ भैंसें अथवा नीच जाति की ४३७५० भैंसे चाहिये। आर्थिक दृष्टि से तो यह प्रश्न बहुत ही महत्वपूर्ण है और इसलिये प्रत्येक पशु-रक्षक समिति को इस अंग की तरफ सदैव अधिक से अधिक ध्यान देना चाहिये। यहाँ यह भी ध्यान देना चाहिये कि नस्ली पशु वर्ष भर में ज्यादा से ज्यादा ८ मास तक और नीची जाति का ६ मास तक दूध दे सकता है, ज्यादा नहीं। इसी लिये बम्बई के लिये वर्ष भर तक ८७५० दूध प्राप्त करने के लिये नस्ली ३५००० भैंसें चाहिये तो नीची जाति की ८७५०० भैंसें।

यहां पर सबसे बड़ा प्रत्यक्ष लाभ तो यही दीख रहा कि नस्ली जानवरों से नीच जानवरों की संख्या ढाई गुना अधिक रखनी पड़ेगी। इसलिये उनको रखने के लिये मकानों, स्टाफ एवं प्रबन्ध इत्यादि में नस्ली गायों की अपेक्षा तिगुना खर्च तो वैसे ही करना पड़ेगा।

दूसरे—नस्ली पशु गैर नस्ली पशु की अपेक्षा दो तृतीयांश चारा खाता है। भारत जैसे चाराहीन देश में पशुपालन में चारे का प्रश्न एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। समझ लीजिये कि गैर-नस्ली पशु १॥ मन रोज चारा खाता है तो नस्ली पशु ४५ सेर चारा खायेगा। इसलिये इन दोनों प्रकार के पशुओं में वर्ष में इतना चारा उठेगा।

नस्ली पशु

बम्बई के लिये वर्षतक दूध देने के लिये चाहिये २५०००

रोजाना चारा खायेंगे = ८७५ × ४५

= ३९३७५ मन रोजाना

वर्षभर ३९३७५ × ३६५

= १४३७१८७५ मन

चारे का भाव ३) रु० मन से ४३११५६२५) रुपया

गैरनस्ली पशु

मुम्बई के लिये वर्षतक दूध देने के लिये चाहिये—८७५००

२१८७५ × ६

= १३१२५० मन दैनिक

वर्षभर में १३१२५० × ३६५

= ४७९०६२५० मन ३) रु० मन से

कुल रुपया— १४३७१८७५० रुपया

अन्तर १००,६०३१२५ रुपया

अर्थात्—अकेले मुम्बई नगर के लिये दूध पूर्ति करने के लिये नस्ली जानवरों के पालन में गैर नस्ली जानवरों के पालन की अपेक्षा केवल वर्षभर में १००,६०३,१२५ रु०का लाभ होगा।

इसमें सन्देह नहीं है कि प्रथम वर्ष तो दूध पूरा पाड़ने की योजना में नस्ली भैंसों को लेने में गैरनस्ली भैंसों की अपेक्षा अत्यधिक कीमत देनी पड़ेगी परन्तु यदि नस्ली भैंसों के मूल्य खर्च और उपज [पैदावार] को एक तरफ रखा जाय और

दूसरी तरफ गैरनस्ली पशुओं के मूल्य, खर्च और उपज को रक्खा जाय तो यह स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि नस्ली पशुओं से इतना अधिक लाभ होता है कि उनका मूल्य खर्चा आदि सब कुछ उस लाभ में से अलग निकल आते हैं इस तरह से उनके पालन से अच्छा दूध मिलने के उपरान्त यथेष्ट आर्थिक लाभ भी हो और शक्ति कम खर्च हो। गैरनस्ली पशुओं को पालन में सबसे बड़ा अलाभ तो यह होता है कि—

[१] पशु ज्यादा रक्खो।

[२] उनके प्रबन्ध में ज्यादा खर्च।

[३] चारे आदि में ज्यादा खर्च।

फिर भी [४] कम पैदावार।

इसलिये जो कोई जीव रक्षक समितियां इस प्रकार व्यापारिक दृष्टि से पशु पालन करना चाहें उन्हें सर्व प्रथम इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि वे नस्ली पशु पालें।

नस्ली पशुओं के पालन से सबसे बड़ा एक और लाभ है और वह यह है कि, यदि नस्ली जानवर को अच्छे सांड से संयोग कराके सन्तान पैदा कराई जाय तो वह बच्चा और भी अधिक नस्ली होगा। वह ज्यादा पैदा करेगा और कम खर्च लेगा और जब वह बेचा जायगा तो उसकी और भी अधिक कीमत मिल सकेगी।

वस्तुतः पशुपालन एक वैज्ञानिक विद्या है। पशुपालनद्वारा लोग वृत्ति उपार्जन करना चाहें उन्हें इस विषय में विज्ञान

की सहायता लेने की अनिवार्य आवश्यकता है। इंगलैंड, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, डेनमार्क, हॉलैण्ड आदि देशोंमें गौरसों [दूध, मेवा, पनीर जमा हुआ दूध मलाई आदि] का लाखों-करोड़ों का व्यापार होता है बल्कि इनमें से कई एक देश तो ऐसे हैं जहां का मुख्य व्यापार केवल गो पालन ही है। ऐसे देशों की रोजी (रोटियां) केवल गोपालन पर ही निर्धारित है, परन्तु यहां पशु पालन की भारत जैसी दुरावस्था नहीं है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा, कि एक एक अमेरिकन धन-कुबेर १८ हजार गौएँ पालता है और उनके द्वारा लाखों पौंड का वार्षिक व्यापार करता है। आस्ट्रेलिया के एक करोड़पति के यहां ४० हजार भेड़े हैं उनसे वह करोड़ों का दूध, मक्खन देने के अलावा हजारों मन ऊन पैदा करता है। वस्तुतः ऐसे देशों में पशुपालन करना एक रोजगार सा बना हुआ है इस लिये वे सभी तरह के वैज्ञानिक उपायों द्वारा पशु और उनके बच्चों की वृद्धि करते हैं। जिस देश में पशु ही मुख्य रोजगार के साधन हैं उसी देश में पशुवर्ग की उन्नति हो सकती है। यदि भारत में वास्तविक पशु रक्षा करनी है तो हमें भी वैसा वातावरण यहां उत्पन्न करना पड़ेगा, जिससे यहाँ पशुओं की अनिवार्य आवश्यकता हो जाय। कोई भी घर पशु बिना एक दिन भी अपना काम न चला सके। फिर देखिये कि पशु वर्ग की कितनी उन्नति होती है और आज जो पशुवर्ग का भीषण हत्याकांड चल रहा है उसको जगह अहिंसा ही सर्वत्र फैल जाय।

पशुपालन में "समृद्धि एवं संरक्षण" की नीति बड़ी आवश्यक है। समृद्धि एवं संरक्षण किनका? मस्ली पशुओं का। मैं यह पहिले ही सिद्ध कर चुका हूँ कि एक नस्ली पशु का पालन बेनस्ली पशु के पालन की अपेक्षा आर्थिक दृष्टि से कितना अधिक महत्वपूर्ण है। सारकप में यह समझ लेना चाहिये कि, नस्ली पशु के मूल्य प्रबन्ध और खर्च आदि तमाम खर्चों में जितना व्यय किया जाता है उससे १० वर्षों में प्रैक्टिकल रीति से १०० गुना अधिक लाभ उठाया जा सकता है। जरा गहरे सोचने से ही इस बात की सत्यता स्वयं सिद्ध हो सकती है। सबसे बड़ा लाभ तो नस्ली जानवर की सन्तति से होता है। जो भैंस १० वर्ष तक लगातार नस्ली सन्तति पैदा करेगी- उससे कितना आर्थिक लाभ हो सकेगा—इसका उदाहरण संक्षेप में यों समझिये।

१ म वर्ष भैंस मोल ली रु० ३००) में
२ य वर्ष B नामक पड़िया
३ य वर्ष C „ „
४ थे वर्ष D „ „
५ म वर्ष E „ „
६ वर्ष F „ „
७ वर्ष G „ „
८ „ H „ „
९ „ I „ „
(१०) „ J „ „

१०

इस वर्ष A नामक पड़िया पैदा हुई।

(३) ,, C ,, ,, ,,

(४) A नामक पड़िया के फिर (८) पड़िया हुई = २

(५) A + B नामक दो पड़ियों के + ५ दो पड़िया = २

(६) A + B + C + Z = ४

(७) A + B + C + D + E + Z + Y = ५ पड़िया

(८) A + B + D + E + F + Z + + +) + + +) +
= १२ पड़िया

(६) १५ पड़ियां

(१०) २० पड़ियां

= ७०

अर्थात् केवल १० वर्ष में यदि एक भैंस वैज्ञानिक उपायों द्वारा पाली जाय तो वही इस थोड़े ही समयमें ८० नस्ली भैंस पैदा कर दे। पशुओं से धन कैसे बढ़ता है उसका यह रहस्य है। पाश्चात्य देश इसी ढग पर पशु पालन करते हैं और यथेष्ट द्रव्य उपार्जन करते रहते हैं।

गैरनस्ली पशु से भी अच्छे सांड के सयोग करने से नस्ली सन्तान पैदा की जा सकती है। यह तो अनुभव द्वारा सिद्ध कर लिया गया है, कि जो भैंस अपनी मामूली अवस्था में ३१५० सेर वार्षिक दूध देती थी उसीसे अच्छे सांड का संयोग कराकर एक अच्छी (नस्ली) बछिया पैदा की गई। उस बछिया ने औसतन ४५३० सेर वार्षिक दूध दिया। इसी तरह से उस

बछिया से भी इसी तरह से एक नस्ली बछिया पैदा की गई और उसने औसतन ५८६० सेर दिया। इससे सिद्ध होता है कि ज्यों २ अच्छे सांडों का संयोग होता जाता है त्यों २ पशुओं में दूध देने की शक्ति बढ़ती जाती है और वे क्रमशः नस्ली बनते जाते हैं। गैर नस्ली पशुओं को नस्ली बनाना और उनसे नस्ली सन्तान पैदा करना भी एक वैज्ञानिक रहस्य है और जो कोई पशु पालन द्वारा लाभ उठाना चाहता हो तो उसे यह उपाय अवश्य जानना चाहिये।

पशु रक्षक समितियां सबसे प्रथम ऐसे नस्ली पशुओं की रक्षा करें। क्योंकि गैर नस्ली पशु की अपेक्षा नस्ली पशु के मारे जाने से अधिक आर्थिक नाश होती है। नस्ली पशुओं की रक्षा के बाद उनकी वृद्धि का नम्बर आता है।

नस्ली पशुओं की समृद्धि के वैसे तो अनेक उपाय हैं अच्छे सांड का संयोग कराना ही है। इसलिये जो पशु रक्षक समितियां पशु पालन का काम उठायें वे सर्व प्रथम २-४ अच्छे नस्ली सांड अपनी शाला में जरूर रक्खें।

आजकल देश में गोशालायें बहुत हैं परन्तु उनसे तो पशु वर्ग को लाभ नहीं पहुँचता। हमारे देश में गोशालायें व्यापारिक दृष्टि से नहीं खोली जाती, केवल धार्मिक उद्देश्य एवं दया ही उनकी स्थापना के मूल कारण हैं यही कारण है कि इन गोशालाओं से कोई भी लाभ नहीं पहुँचता। लोग दया के कारण मृत्यु से बचाने के लिये पशु को गोशाला में छोड़ देते हैं। परन्तु गोशालाओं की रिपोर्टों से यह सिद्ध होता है कि उनके यहां अन्यत्र की अपेक्षा अधिक पशु मरते हैं। इसके कारण कुछ

अन्य भी भले ही हों परन्तु उनमें से यह भी एक मुख्य है कि यहां पर वैज्ञानिक रीति पर पशुपालन नहीं होता। जो गायें एवं भैंसें केवल थोड़ा सा परिश्रम एवं वैज्ञानिक उपाय द्वारा बड़े कीमती बनाये जा सकते हैं उनमें कीमती नस्ली सन्तति पैदा की जा सकती है। वे ही पशु यहां वैज्ञानिक शिक्षा के अभाव से बेकार से रहते हैं और गौशालाओं का स्थापन एवं सञ्चालन होता है उससे तो पशुधन को कोई लाभ नहीं होता प्रत्युत आर्थिक क्षति और भी होती है। इसका उदाहरण तो बड़ी आसानी से यों दिया जा सकता है —

"समझ लीजिये कि एक आधुनिक गौशाला में इस समय २०० गायें भैंसें हैं। इनके वैज्ञानिक पालन का कोई प्रबन्ध नहीं है। परिणाम यह होता है कि ये २०० के २०० पशु ही कुछ पैदा न करते हुए १०-५ वर्षों में खतम हो जाते हैं। दूसरी तरफ १० भैंसें वैज्ञानिक रीति से पालन की जाती हैं मैं आपको पहिले यह बता चुका हूँ कि १० वर्ष में वैज्ञानिक उपायों द्वारा पाली हुई १ भैंस से ८० मूल्यवान भैंसें उत्पन्न की जा सकती इसलिये दस भैंसों को दस वर्ष पीछे ८०० हाथी के बच्चे जैसी दुधार भैंसें तैयार हो जायेंगी। आधुनिक गौशालाओं की परिपाटी आर्थिक दृष्टि से देश के लिये हानिकर ही है और इससे पशु धन की उन्नति की जगह अवनति ही होती है। इसलिये यदि हम वस्तुतः पशु पालक हैं और पशुओं पर हमें दया आती है, तो यह सर्व प्रथम आवश्यक है कि इन गौशा

स्थाओं में पाश्चात्य वैज्ञानिक उपायों का प्रवेश किया जाय। हम पशुओं को दया दृष्टि से पालन करें परन्तु आर्थिक दृष्टि से पालन करें। मैं फिर भी कहता हूँ और जोरदार शब्दों में अपील करता हूँ कि हम दयादृष्टि से ही पशु रक्षा का विधान अब छोड़ देवें। पशुरक्षा में केवल दया के आ जाने से ही उनका आर्थिक महत्व घट गया है, जो कि आज उनकी अवनति का मुख्य कारण है।

इसका एक ही सरल उपाय है कि पास पास जिलों की १८—२० गोशालायें एक संयुक्त ट्रस्ट रूप में संगठित हों। गोशाला किसी की निजी सम्पत्ति न समझी जाय और पशुधन की वृद्धि करना ही इनका एकतम उद्देश्य हो। ये गोशालाएँ अन्धाधुन्ध पशुओं को दाखिल न करें। जितने पशुओं का वे वैज्ञानिक रीति से पालन कर सकती हैं उतने ही को वे प्रविष्ट करें और पीछे प्रविष्ट किये हुए पशुओं को नस्ल बढ़ायें। यदि ये इस वैज्ञानिक ढंग पर काम करेंगी तो एक दिन वह समय आजायगा कि अपना निर्वाह के लिये जनता के सामने सहायता के लिये हाथ न पसारना पड़ेगा। इसके सिवाय पशुरक्षा के वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति तो अवश्य होगी ही। पशुरक्षा का वास्तविक अर्थ आर्थिक प्रश्न में समाया हुआ है और ऐसी वैज्ञानिक गोशालायें आर्थिक उद्देश्य की पूर्ति में समर्थ होंगी—इसमें सन्देह नहीं रहता।

(६) आज देश से वैज्ञानिक पशुरक्षा का ज्ञान निकल जाने से पशुओं का आर्थिक महत्व घट गया है, उसी का यह परिणाम है कि पशु हिंसा यहां इतने जोरों पर है। यदि यहां वैज्ञानिक पशु शिक्षा का प्रचार होता तो न तो यहां इतने सस्ते पशु ही मिल सकते थे और न यहां चमड़े, खून, हड्डी, आदि तुच्छ व्यापारों के लिये पशु जैसा देश का धन नष्ट ही किया जा सकता था। परन्तु भारत के दुर्भाग्य से यहां वैज्ञानिक पशु-पालन का सर्वथा अभाव है इसलिये इन संस्थाओं का सबसे प्रथम यही कर्तव्य है कि वे चारा तरफ पशु विज्ञान सम्बन्धी सरल सुलभ साहित्य घर २ मुफ्त भेजें। जगह २ का गौशालाओं को संगठित करें और उनमें वैज्ञानिक उपाय कार्य परिणत किये जायें प्रत्येक गौशाला में एक-दो पशु विज्ञान के विशेषज्ञ अवश्य रहें। अच्छे सांड तैयार किये जायें। उनको उनके कार्य के लिये रक्षित रखा जाय और उनके भरण पोषण का भली प्रकार इन्तजाम किया जाय उनके द्वारा अच्छे अच्छे पशुओं की नस्ल बढ़ाई जाय और पशु पालन से उत्तम से उत्तम आर्थिक लाभ उठाया जा सके फिर देखिये कि देश में पशुपालन का प्रचार क्योंकर नहीं होता है। मुझे तो पूर्ण आशा है कि पशु हिंसा को रोकने का एकतर साधन यही वैज्ञानिक पशु पालन शिक्षा है। इसीसे पशुओं की कीमत बढ़ेगी, देश की समृद्धि में वृद्धि होगी, व्यर्थ का नाश कम होगा और य सब तरह से फूलेंगे फलेंगे।

(१०) पशु हिंसा रोकने के लिये पशु रक्षक समितियों का यह प्रथम कर्तव्य है कि व इस देश के कसाइयों को किसी दूसरी जीविका द्वारा वृत्ति उपार्जित करने का मार्ग बतावें। इस अभागे देश में गोत्र का ऐसा मनगढ़न्त साम्राज्य छाया हुआ है कि जिससे देश को सर्व प्रकार से हानियां पहुँच रही हैं। इंगलैण्ड आदि देशों में तो एक मोची सी प्राइम मिनिस्टर बन सकता है, अमेरिकन एक ग़रीब किसान का बच्चा कालान्तर में अमेरिकन स्टेट्स का प्रेसीडेन्ट बन सकता है परन्तु इस अभागे देश में तो जो आदमी कसाई के घर पैदा हुआ है उसे केवल पशुवध करने से ही अपनी रोटियां कमानी पड़ती हैं। कितनी भयकर दुःखदायक बात है कि भारत सरीखा प्रज्ञाशाली देश केवल मनगढ़न्त इस ऊंच नीच गोत्र के भेद की मृगमरीचिका में बुरी तरह फँसा हुआ है। जिससे उसके तो अमूल्य पशु धन का नाश हो रहा है। दूसरी तरफ़ वे आदमी अपने आत्मधर्म से च्युत हो रहे हैं। आपको सुनकर आश्चर्य न करना चाहिये कि इस अहिंसामय भारत में ३६८६७५३ कसाई हैं जिनकी एकमात्र वृत्ति का साधन पशुवध ही है। जिस देश में ३७ लाख के लगभग मनुष्य पशुओं को मार कर ही अपना पेट भर सकते हैं वहां पशुवध का बाजार अनिवार्य तेज हो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? यदि भारत में वस्तुतः पशु हिंसा बन्द करनी है तो पशुरक्षक समितियों का यह भी एक कर्तव्य होगा कि वे इन कसाइयों की दूसरी वृत्ति

लगावें। उन्हें कृषि, वाणिज्य, सेवा, शिल्प आदि क्षेत्रों में प्रवृत्त किया जाय, देखिये फिर पशुवध क्यों कर बन्द नहीं होता।

(११) आधुनिक गोशाला प्रणाली का या तो अन्त लाया जाय या उनको आर्थिक महत्व दिया जाय। जब तक यहां धर्म पालन की दृष्टि से पशुपालन होता रहेगा तब तक पशुओं का वास्तविक महत्व नहीं फैल सकता—जिससे कि अन्य लाखों पशुओं को महाकष्ट भोगना पड़ता है क्योंकि सभी कोई पशु तो गोशाला में जा ही नहीं सकते हैं। गोशालाओं ने पशुओं के साथ सबसे बड़ा अन्याय तो यही किया है कि उनका आर्थिक महत्व नष्ट कर दिया है। इस लिये यह प्रथम आवश्यक बात है कि पशुओं का आर्थिक महत्व दिया जाय। इस महत्व प्राप्ति का सर्वोत्तम उपाय यही है कि ये दुधारू पशु हमारी व्यापार वृद्धि के साधन बनें। आज देश में एक तरफ तो गौओं एव दुधारू पशुओं की कमी होती आ रही है तो दूसरी तरफ गो रसों की मांग बेतरह बढ़ रही है। प्रति वर्ष यहां पर नई नई तरह के लाखों डिब्बे जमे हुए दूध के, मक्खन, पनीर, क्रीम, और तो क्या लाखों मन वेजीटेबिल घी भी आ रहा है इससे सिद्ध होता है कि यहां पर गोरसों की मांग खूब बढ़ रही है। यदि ये गोशालाएं संगठित होकर इन कार्यों को हाथ में लें तो कौन कह सकता है कि ये देश की एक आवश्यक मांग की पूर्ति नहीं करेंगी ? आज इस देश का करोड़ों रुपया विदेश विलायती गोरसों के खरीदने में परदेश जाता

यदि इस व्यापार को यहां की गोशालायें, उठालें तो अवश्य ही वे सस्ते दामों पर उत्तम गोरस देश को अर्पण कर सकें। गोशालायें अब डेरी फार्म का रूप लें। अब यह समय आगया है कि वे डेरी फार्म के रूप में ही देश की कुछ सेवा कर सकेंगी अन्यथा उनसे पशु नाश के साथ २ देश की आर्थिक क्षति के सिवाय और कुछ हाथ न लगेगा।

ये गोशालायें यदि शहरों के आसपास हों तो सर्व प्रथम काम उनका स्वच्छ दूध सप्लाई करने का है। बम्बई जैसे नगरों को केवल दूध सप्लाई करने के लिये यहां पर कमसे कम ३७५०० भैंसे चाहिये। यदि एक डेरी कम्पनी इतने मूल धन से खड़ी की जाय तो हाल में ही करोड़ों रुपए चाहिये—परन्तु यदि यहा की अनेक पिंजरापोल और शहर के अन्दर बाहर की सभी गोशालाएं एक स्कीम (दूध पूरा पाड़ने की व्यवस्था) को उठा लें तो मुझे पूर्ण आशा है कि एक तो—बम्बई निवासियों को शुद्ध दूध पीने को मिले और साथ ही साथ इन संस्थाओं को भी खूब ही आर्थिक लाभ मिले। इसके सिवाय दूसरे काम भी बहुत हैं। ये जमे हुए दूध तैयार करें, मलाई, क्रीम, पनीर आदि बनायें, मक्खन बेचें और घृत भी बेचें। ये काम थोड़े नहीं हैं। हां, इनकी पूर्ति के लिये वैज्ञानिक उपाय जरूर चाहिये।

(१२) पशु रक्षक समितियों का पशुरक्षा के नाते से एक

और भी कर्तव्य है और वह यह है कि वे कसाईखाने जाती हुई नस्ली गायों भैंसों को जरूर बचायें। नस्ली दुधारू पशु का क्या महत्व है और उससे आर्थिक लाभ कितना है इन दोनों विषयों पर मैं पिछले पेजों में प्रकाश डाल चुका हूँ। इसलिये यदि एक भी नस्ली दुधारू पशु कट गया तो समझिये कि देश की उतनी ही नहीं प्रत्युत उस भैंस की कीमत से बीस गुनी समृद्धि नष्ट होगई। क्योंकि उसके कट जाने से यही बात नहीं है कि वह स्वयं ही नष्ट होती है परन्तु साथ ही साथ उसमे उत्पन्न होनेवाली नस्ली प्रजा भी नष्ट हो जाती है जो कि आर्थिक दृष्टि से सबसे बड़ा अलाभ होता है।

इसका सरल उपाय यही है कि पशुरक्षक समितिया अपने आसपास के गांवों के ऐसे आदमियों का नाम रजिस्टर में रक्खें जिनके यहां कोई नस्ली दुधारू पशु हों। उन सब आद मियों को उन नस्ली पशुओं से और भी सन्तान पैदा करने की तरकीबें, सुशिक्षाएं, पशु चिकित्सा सम्बन्धी नियम आदि का मुफ्त सरल साहित्य दिया जाये, उनको विधेयात्मक (Practi cal) ज्ञान दिया जाये, उन्हें नस्ली पशु की कीमत समझाई जाए, उससे वे कैसे आर्थिक लाभ उठाये इसके सुगम उपाय बताए जाय। इतना ज्ञान एव सहानुभूति मिलने पर यह स्वाभाविक ही है कि पशुपतियों का प्रेम ऐसी पशु रक्षक समितियों की तरफ अवश्य ही बढ़ेगा। इस तरह से सब पशुपति इन संस्थाओं से निकट सम्बन्ध में आजायेंगे और

अपने नस्ली पशु का महत्व समझने के कारण प्रथम तो—कोई भी किसी भी अवस्था में पशु बेचेगा नहीं-और यदि कदाचित उसे बेचने के लिये बाध्य ही होना पड़े-तो वह कसाई की अपेक्षा ऐसी पशु रक्षक संस्थाओं को पशु बेचना कहीं अधिक पसन्द करेगा इस तरह से कोई भी पशु कसाइयों के हाथ न पड़ेंगे। भारत में तो ऐसा कोई निष्ठुर प्राणी नहीं जो एक भैंस का १०-५ वर्ष दूध पीकर पीछे जान बूझ कर कसाई के हाथ में उसे बेचदे। आज भारत में जो इतने अच्छे पशु कसाइयों के हाथ लग जाते हैं उसका मूल कारण यही है कि उनके पालक प्रथम तो यही नहीं जानते कि उनका पशु नस्ली है या गैरनस्ली। इस अज्ञान के कारण परिणाम यह होता है कि ज्योंही पशु दूध देना बन्द करता है त्यों ही पशुपति नये पशु लाने की आशा में उसे जहां कहीं भी बेच डालता है और अन्त में उसे कसाई की तेज छुरी के नीचे होकर कटना पड़ता है। इसलिये प्रथम तो पशु रक्षक संस्थाएं ऐसा उपाय करें कि वह पशु बेचा ही न जाय और यदि बेचा भी जाय तो वे ही उसे खरीद लें जिससे वह कसाई के पास न पहुंच पावें।

वस्तुतः पशु रक्षा का विषय बड़ा महत्वपूर्ण होने के साथ साथ विविध प्रकृतिमय है। जिस तरह मनुष्य समाज है उसी तरह पशु समाज भी है और जिस तरह प्रत्येक मनुष्य की उन्नति के लिये कोई एक मार्ग निश्चित नहीं है, वैसेही पशु समाज की उन्नति के लिये भी कोई निश्चित उपाय नहीं बताये

जा सकते। जैसे प्रत्येक मनुष्य की उन्नति के लिये परिस्थिति एवं योग्यता के अनुसार भिन्न २ उपाय होते हैं ठीक ऐसे ही प्रत्येक पशु की उन्नति के लिये भिन्न २ उपायों का आश्रय लेना पड़ेगा। इसके लिये जरूरत है केवल दो बातों की—

(१) पशु विज्ञान का प्रचार और

(२) पशु रक्षा का आर्थिक दृष्टि से निराकरण होना। यदि उक्त ये दो और पिछले पृष्ठों में लिखी गई १० बातें ध्यान में रक्खी जायगी तो वस्तुत: पशु पालन का जो अर्थ है उसका पूरा पालन समझा जायगा और जो कुछ भी द्रव्य इस तरह पशु रक्षा में लगाया जायगा वह सफल होगा इतना ही नहीं प्रत्युत नस्ली गो, भैंस एवं इनकी नस्ली सन्तति की वृद्धि कर देश को वैभवशाली बनाने में समर्थ होगा। इससे बढ़कर पशु-रक्षा के निमित्त लगाये हुए द्रव्य का और कोई सदुपयोग नहीं हो सकता।

इन उद्देश्यों के साथ देश में आज २—४ संस्थायें काम भी कर रही हैं। परन्तु फिर भी मैं कहूंगा कि उनका कार्यक्रम केवल आंशिक ही है इसलिये उन्हें आंशिक ही सफलता मिलती है। भारत के दुर्भाग्य से ऐसी संस्थाओं की संख्या स्वल्प है। उनमें से निम्न लिखित संस्थाओं की तरफ आपका ध्यान विशेषता से खींचना चाहता हूं:—

(१२) घाटकोपर जीव दया खाता—यह संस्था देश में प्रायः प्रयत्न प्रसिद्ध ही है। इसकी प्रसिद्धि का मूल कारण केवल यही है कि इस संस्था ने पशुपालन को आर्थिक दृष्टि से सुलझाने का प्रयास किया है। यद्यपि इसकी आधुनिक सफलता आंशिक ही है परन्तु हमें यह कहते हुए कोई संकोच नहीं होता कि यह पशुपालन के उच्चतम आदर्श के पंथ पर अग्रगम्य है। यदि आज इसे आंशिक सफलता मिली है तो कालान्तर में इसे पूर्ण सफलता भी मिल सकेगी—क्योंकि यह सफलता के मार्ग पर है।

कुछ लोग इसकी एक प्रवृत्ति से असन्तुष्ट से हैं। वे कहते हैं कि यह संस्था २-४ गुना मूल्य देकर कसाइयों से पशु माल लेती है।* परन्तु वैसे बन्धुओं को मैं शान्ति से यह बतला देना चाहता हूँ कि यदि एक नस्ली भैंस को २-४ गुनी कीमत तो क्या यदि एक बार १० गुना दाम देकर भी कसाई के हाथ में जाने से बचाया जा सके तो यह द्रव्य का पूर्ण सदुपयोग है मैं आपको कह चुका हूँ कि यदि एक नस्ली भैंस वैज्ञानिक उपायों द्वारा १० वर्षों तक पाली जाये तो वह अपनेसे अधिक नस्ली लगभग ८० और भैंसें तैयार कर देती है। नस्ली भैंस को २-४ गुनी देकर बचाने के ऊपर टीका करने वाले सभी

---

* लेखक को पीछे मालूम पड़ा है कि यह संस्था कसाइयों से पशु मोल नहीं लेती है, परन्तु कतलों में से लेती है जो और भी प्रशंसनीय है।
—लेखक

तक यह अपार वंशवृद्धि का लाभ क्यों कर भूल जाते हैं ? समझ लीजिये कि एक वर्ष में १०० भैंसे ४ गुनी कीमत देकर कसाइयों से बचाई गई। इसमें सन्देह नहीं कि ४ गुनी कीमत देने से ये १०० भैंसें ४में ४०० भैंसों के मूल्य में पड़ी परन्तु १० वर्ष के बाद ये ही १०० भैंसें लगभग ९०००० हजार हाथी के बच्चे जैसी नस्ली भैंसें तैयार कर देंगी। कहा आप (४००–१००) ३०० भैंसों के अधिक मूल्य के लिये शिकायत करते हैं और परिणाम में तो ये आपको ८७०० अधिक भैंसें मिलती हैं कहां ३०० भैंसों का तुच्छ मूल्य और कहां ८७०० भैंसों का कोट्यवधि मूल्य ? वस्तुतः ऐसी शिकायत उन्हीं लोगों की हैं जो पशु रक्षा को आर्थिक महत्व नहीं देते हैं। इस संस्था ने पशुरक्षा के मार्ग में खास पांच उपाय ऐसे किये हैं जिससे आशा होती है कि एक दिन इस संस्था को पूर्ण सफलता मिलेगी वे पाँच उपाय ये हैं :—

(१) नगर को दूध पूरा पहुंचाने की स्कीम।

(२) नस्ली पशुओं की संरक्षा।

(३) नस्ली पशुओं की सन्तति अभिवृद्धि।

(४) नस्ली पशुओं को कसाई घर जाने से रोकना।

(५) अपनी अन्तर्गत गौशालाओं का संगठन।

ये पांचों ही उपाय बड़े अमोघ हैं और अच्छा परिणाम देने वाले हैं इनके महत्व के ऊपर मैंने पिछले पेजों में प्रकाश डाला ही है यद्यपि इसके सिवाय और भी कुछ उपाय इस

नशिष हैं अथवा जो थोड़े हैं उनको विस्तृत रूप देने की जरूरत है। परन्तु फिर भी यह मानना पड़ेगा कि ये मार्ग ही ऐसे हैं जो पशु रक्षा के असली उद्देश्य को सिद्ध करते हैं।

दूसरी संस्था है—आगरा की जीव दया प्रचारिणी सभा। इस संस्था ने अपने गत थोड़े से ही वर्षों के कार्यक्रम में अब तक देश के बड़े बड़े ५० तीर्थों पर होने वाली लाखों पशुओं की हिंसा बन्द कराई है। और अब भी बन्द करा रही है। प्रति वर्ष और कहीं २ तो वर्ष में अनेकबार हिन्दुओं के तीर्थ सर कारी कसाईखानों को भी मात कर देते हैं। हजारों लाखों बड़े बड़े पशुओं के बलिदानों से देव मन्दिर रंग जाते हैं, खून की नदियां बहती हैं—यह है भीषण दृश्य हिन्दू तीर्थों का तीर्थ स्थानों की बलिहिंसा तो और भी जघन्य है। और लोग तो खाने और चमड़ा प्राप्ति के लिये पशु मारते हैं परन्तु ये हिन्दू लोग केवल धर्म की उपासना एवं मोक्ष प्राप्ति के मनगढ़त वा देवतों को खुश करने के लिये पशुवध करते कराते हैं। ऐसे तीर्थों पर प्रत्येक वर्ष कम से कम १०-१२ लाख पशु काट जाते हैं कितना हृदय विदारक जीवों का वध। कहने और सुनने वालों दोनों का ही दुख होता है। उस व्यर्थ हिंसा को रोकने का यह संस्था भागीरथ प्रयत्न कर रही है और अबतक इसे अनेक तीर्थों पर पूर्ण सफलता मिली है, और लाखों पशुओं का वार्षिक वध बन्द कराया है।

इन संस्थाओं के सिवाय और भी २-४ ऐसी संस्थायें हैं

जो तीर्थ स्थानों की बलि हिंसा बन्द करा रही हैं दूसरी, सस्ते साहित्य एवं उपदेशकों द्वारा वे पशु रक्षा का कार्य कर रही हैं परन्तु ऐसी कोरी रक्षक संस्थाओं से भक्तों का काम बन्द नहीं होता। इसलिये आज तो ऐसा उपाय करना चाहिये जिससे नस्ली पशुओं की वृद्धि हो और देशभर में प्रत्येक गृहस्थी पशुरक्षा का आर्थिक महत्व समझे। पशुरक्षा हमारे यहां केवल दयादृष्टि से ही न हो परन्तु इससे हमारे देश के लाखों बेकार मनुष्यों को रोजी-रोजगार मिले, यहाँ बड़े २ डेरीफार्म खुलें और वे तमाम देश की गोरसों की मांग की पूर्ति कर सकें। अभी हाल में तो ऐसी संस्थायें केवल दो कार्य करें।

(१) पशुरक्षण को आर्थिक दृष्टि से समन्वय करने वाले सस्ते एवं सुलभ साहित्य का प्रचार कर वैसा वातावरण पैदा करें।

(२) यदि वे हाल में स्वकीय डेरीफार्म या घाटकोपर जीव दया की सी प्रवृत्तियां ग्रहण न कर सकें तो कम से कम उनके गांव या आस पास की गौशालाओं में ही इस आर्थिक महत्व को प्रविष्ट करें और उन्हें आर्थिक दृष्टि बिंदु का साधन बनाने का उपाय करें।

यदि कुछ वर्षों तक ये रचनात्मक कार्य अपना मजबूत वातावरण बना लेगा तो निश्चय समझिये कि पशुरक्षा की

वास्तविक प्रारम्भिक भूमिका तैयार हो चुकी। प्रथम ऐसा बलवान वातावरण बनाये बिना अन्य उपायों का प्रयास बहुत कम सफलता दे सकेंगे। इसलिये यह प्रथम आवश्यक है कि सर्व प्रथम ऐसा बलवान वातावरण बनाया जाय, जन साधारण और खास करके कृषक वर्ग को पशुरक्षा का महत्व आर्थिक दृष्टि से मुख्यतः सिखाकर पशुरक्षा की दृढ़ नींव जमाई जाय। यदि देश का सौभाग्य होगा तो इसी नींव पर पशुरक्षा का सुदृढ़ किला बांधा जा सकेगा। भारत का गोधन अन्य पाश्चात्य देशों से किसी भी बात में कम नहीं है। यदि हम आज ऐसा बलवान वातावरण पैदा कर जायेंगे तो हमारी आगामी सन्तानें पशु रक्षा को आदर्श रूप से कर सकेंगी। हमारी सन्तानें देश की आधारभूत और हमारे विकाश एवं उदय के मूलकारण पशुरक्षा के केवल हिमायती ही न हों, प्रत्युत आज अमेरिकन एव आस्ट्रेलियन पशुपति के समान स्वयं भी आदर्श गोपति—बनें इसके लिये यह प्रथम आवश्यक है कि हम पशु रक्षा का यहाँ पर बलवान वातावरण एवं ज्ञान पैदा जायें। भविष्य की प्रजा के लिये हमारे ऊपर उक्त दोनों कर्तव्यों की पूर्ति का उत्तरदायित्व अवश्य लगा हुआ है।

अन्तमें मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ कि भारत जब अपनी चरमोन्नति दशामें था उसी समय यहाँ पशुपालन करना चतुर्वर्णों का एकतम कर्तव्य था। यदि हमें वही अभ्युदय पुनः प्राप्त करना है तो हमें पुनः पशुओं की सेवा में आना पड़ेगा।

भारत कृषि प्रधान देश है, इसलिये इसकी उन्नति, विभूति, सम्पत्ति, स्वास्थ्य, कृषि आदि समस्त समृद्धियां पशुपालन में ही समाई हुई हैं इस बात को हमारे प्राचीन पूर्वज लोग बखूबी मानते थे। ऋग्वेद में एक जगह लिखा है—

ईषेत्वोर्जे त्वा वा यवस्य देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भाग प्रजावतीरम् मीवा अयक्ष्मा या वस्तेन ईशेत् माघश सो ध्रुवा स्मिन् गोपितो स्यात् बह्वर्यजनमानस्य पशून पाहि ॥

अर्थात्—हे देव! तेरे प्रसाद से हमें आध्यात्मिक एवं शारीरिक बल को प्राप्ति और पुण्यमय कर्मों की साधना के लिये सदा ही शक्ति एवं समृद्धि को बढ़ाने वाली बहुत सी गायें (सामान्य दुधारू पशु) मिलें ये गायें सुन्दर हृष्टपुष्ट हों, इनके बहुत से बच्चे हों, ये निरोग रहें। इनका नाश न हो। चोर इनको चुराकर न ले जाय और गोपतियों की संरक्षा में इन्हें बिल्कुल भी कष्ट न हो इसलिये तू हमेशा इनकी रक्षा कर। यही भावना आज देश के कोने २ में फैले और पशु रक्षा सम्बन्धी विधान को सारा देश पुनः अपनावे। इस भावना के साथ मैं अपने निबन्ध को समाप्त करता हूँ।

॥ सम्पूर्ण ॥

साहब की सम्प्रदाय के घोर तपस्वी जी मुनि श्री सागरमलजी, महाराज साहब ने जब समशन व्रत किया (५६ दिन का) उस समय जीवदया फण्डमें हजारों रुपये इकट्ठे हुए जिनमें से केवल १५०) रुपये इस संस्था को जीव दया की पुस्तकें प्रकाशित करने को भेजें जिसके द्वारा यह पुस्तक तैयार करके हम भी जैनपथ प्रदर्शक के ग्राहकों को अमूल्य भेंट द रहे हैं। अत श्री संघ भय कसाईखानों से जीव छुड़ाने के स्थान विवेक पूर्वक हिंसकों को सुशिक्षा व व्यवसाय दान देय तो हिंसा घट सकती है। अन्यथा करोड़ों रुपये चालू प्रथा में खर्च किये जाने पर भी हिंसा बढ़ती ही गई है। विवेक में ही धर्म है।

पचूँदा निवासी श्रीमान् सेठ विजयराजजी सज्जनराजजी महेता ने भी अपनी पूज्य मातुश्री के स्मरणार्थ एक हजार प्रति इसकी प्रकाशित की है, अत आपको भी धन्यवाद है।

विनीत—

मगनमल कोचेटा।

* वन्दे वीरम् *

शरीर सुधार

प्रकाशक—

रत्नलाल महत्ता

जैन उत्तम साहित्य प्रकाशक मण्डल

उदयपुर-मेवाड़

बाबू श्रीदुर्गाप्रसाद के प्रबन्ध से श्रीदुर्गा प्रेस, मानमण्डी

अजमेर में छापकर प्रकाशित किया।

प्रथमवार २००० } वीर सं० २४५६ मूल्य)॥

सूचना

आज जब हम देशवासी महानुभावों को देखते हैं तो उनकी मुखाकृति से उनके शरीर निरोग नहीं होने की सूचना मिलती है। यद्यपि बहुत लोग ऐसे हैं कि जो खुद को निरोगी मान बैठे हैं तथापि सूक्ष्म दृष्टि से हमारी संग्रह की हुई सब बातों को आदि से अन्त तक पढ़ें तो वे स्वयं ही मान लेंगे कि हां, अवश्य हम रोगी हैं और यह तन्दुरुस्ती का ह्रास ही हमारे अशुभ दिनों की सूचना दे रहा है।

हमारे देशवासी भाई बहुधा कहा करते हैं कि अमुक रोग कैसा बुरा है कि वह हमारा पीछा नहीं छोड़ता, इसने हमारे शरीर को अर्जरीभूत कर दिया है, बहुत उपाय किये, किन्तु लाभ नहीं हुआ, अब हम कैसे जीयेंगे? कोई कहता है कि हमारे पास पैसा नहीं है और बिना पैसे के दवा नहीं हो सकती, इस प्रकार तन्दुरुस्ती के लिये कई विचार किया करते हैं, परन्तु हमारे विचार से उनलोगों की मूर्खता उस मूर्खता से किसी प्रकार कम नहीं

है कि जैसे जहाज में बैठने वाला छिद्र उसमें हो जाने से उसकी परवाह न कर जल भर जाने पर डूबते समय इधर उधर भागता हुआ शीघ्रता से बचने का प्रयत्न करता है। यदि वह सुराख होते ही उसके मिटाने का प्रयत्न करता तो यह दशा क्यों प्राप्त होती। यही हाल हमारे उन भाइयों का भी है कि जिनका वर्णन ऊपर किया जा चुका है कि वे पूर्ण रोगी हो जाते हैं तब दवाइयों की खोज में निकलते हैं।

यह मसल मशहूर है कि "एक तन्दुरुस्ती हजार न्यामत" यदि एक इसी मसले को आप स्मरण रक्खें और अपनी तन्दुरुस्ती ठीक रखने के लिये हमारी "शरीर सुधार बिना पैसे की दवा" के नियमों को आचरण में लावें तो आप दवाई सेवन के बनिस्बत ज्यादह तन्दुरुस्त रह सकते हैं।

'बिना पैसे की दवा बताने के लिये उपदेशों तथा पुस्तकों की कमी है और इसी कमी के कारण बाजारू वैद्य हकीमों की दिनोदिन वृद्धि होती जा रही है। और इन महानुभावों की तादाद ज्यादह बढ़ने से तन्दुरुस्ती बिगड़ती जा रही है।

इसलिये बिना पैसे की दवा विद्वानों से संग्रह कर आरोग्य के लिये यहां लिखी गई है।

मेरे प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि आप इसे पढ़कर अपने शरीर को निरोग बनाने के लिये अपने दैनिक खानपान आहार विहार को ऐसा बनावें कि जिससे आप रोग के चगुल से मुक्त हो सकें। अगर इस पुस्तक से हमारे देश भाइयों का कुछ भी लाभ हो और वे अपने अमूल्य शरीर रूपी रत्न की रक्षा करते हुए तन्दुरस्ती बढ़ा सकें तो मैं अपना परिश्रम सफल मानता हुआ आगे १४ वें पुष्प में भयकर रोगों से बचने के उपाय संग्रह कर लिखने का प्रयत्न करूंगा।

निवेदक

रत्नलाल मेहता

उदयपुर (मेवाड़)

उपवास और अमेरिकन डाक्टर्स

उपवास चिकित्सा में से

---

(१) पेट पूर्ण होने से भोजन में स्वय अरुचि होती है, फिर भी अज्ञानी लोग अचार, चटनी और मसाले के निमित्त से ज्यादा भोजन करके दाठ लगाते हैं, वह विष के समान हानि करता है।

(२) शरीर खुद खराब वस्तु को स्थान नहीं देता, मल, मूत्र, सेश्रा, पसीना आदि को उत्पन्न होते ही फेंक देता है।

(३) खिड़कियें बन्द करके सोने के बाद उसे खोलने से सरदी लगती है। किन्तु हवा में सोने से सरदी नहीं लगती। ज्यादा भोजन करने से मल सड़ने से दिमाग में दर्द व भ्रमनेम्बम आदि होते हैं।

(४) शरीर के लिये हवा बहुत कीमती पदार्थ है हवा से शरीर को कभी नुकसान नहीं होता है।

(५) शरीर में अन्न जलादि के सिवाय सर्ववस्तु विष का काम करती है।

(६) शरीर अपने भीतर रातदिन भाड़ देकर रोग को बाहिर निकालता है।

(७) उपवास करने से जठराग्नि रोगों को भस्म करती है।

(८) बुखार आने के पहले बुखार की दवा लेना यह निकलते विष को शरीर में बढ़ाने के समान है।

(९) ऐसा एक भी रोग नहीं है जो उपवास से न मिट सके।

(१०) स्वाभाविक मृत्यु से दवाई से ज्यादह मृत्यु होती है।

(११) एक दवाई शरीर में नये बीस रोग पैदा करती है।

(१२) अनुभवी डाक्टरों को दवाई पर विश्वास नहीं है।

(१३) बिना अनुभव वाले डाक्टर दवाई पर विश्वास करते हैं।

(१४) दुनियां को नीरोग बनाने का बड़े २ डाक्टरों ने एक इलाज ढूंढा है वह यह है कि दवा इयों का जमीन में गाड़दा।

(१५) उपवास करने से मस्तिष्क शक्ति घटती नहीं है।

(१६) मनुष्य का खानपान पशु ससार से भी बिगड़ा हुआ है।

(१७) ज्यादा खाने से शरीर मे विष और रोग बढ़ता है।

(१८) दुष्काल की मृत्यु सख्या से ज्यादह खाने वाले की मृत्यु सख्या विशेष होती है।

(१९) ज्यादा खाना अन्न को विष और रोग रूप बनाने के समान है।

(२०) कचरे स मच्छर पैदा होते हैं और उस को दूर करना परम जरूरी है। उसी तरह ज्यादा खाने स रोग रूप मच्छर पैदा होते हैं उनको भी दूर करना परम आवश्यक है दूर करने का एक सरल उपाय उपवास है।

(२१) ज्यों २ अनुभव बढ़ता है त्या २ डा क्टरों को दवाई के अवगुण प्रत्यक्ष रूप से मालूम होते जाते हैं।

(२२) बड़े २ डाक्टरों का कहना है कि रोग को पहिचानने मे हम सर्वथा असमर्थ हैं केवल अन्दाज से काम लेते हैं।

(२३) रोग उपकारक है वह बताता है कि अब नया कचरा शरीर म मत डालो। उपवास स पुराने को जलादो।

(२४) शरीर को सुधारने वाला डाक्टर शरीर ही है। दवाई को सर्वथा छोड़ विवेक पूर्वक उपवास करने से सौ रोगियों में से नब्बे रोगी सुधरते हैं और यही दवाई जवें तो नब्बे रोगी ज्यादा बिगड़ते हैं।

(२५) जैसे शरीर में घाव स्वयं भर जाता है वैसे ही सब रोग बिना दवाई के मिट जाते हैं।

(२६) शरीर में उत्पन्न हुए विष को फेंकने वाला रोग है। घर के मैले व कचरे को ढाकने के तुल्य दवाई है जो थोड़े समय अच्छा दिखावे करके भविष्य में भयंकर रोग फूट निकालती है। जब कि शुद्ध उपवासों से रोग के तत्त्व नष्ट होते हैं वह इस मैले कचरे को फेंकने के समान है कचरा फेंकने में पहले थोड़ा कष्ट, पीछे बहुत सुख, इसी प्रकार तपश्चर्या में थोड़ा कष्ट पड़ता है। कचरा ढांकने में पहले थोड़ा आराम पीछे से बहुत दुःख। इसी प्रकार दवाइयों से रोग ढांकने में प्रथम लाभ पीछे से बहुत दुःख निरन्तर भोगने पड़ते हैं।

(२७) ज्यों २ दवाई बढ़ती जाती है त्यों २ रोग भी बढ़ते जाते हैं। मनुष्य दवाइयों की आतुरता

और मोह छोड़कर कुदरत के नियम पालेंगे तब ही सुखी होवेंगे।

(२८) दवाई से रोग नष्ट होता है यह समझ ही शरीर का नाश करने वाली है। आज इसीसे जनता रोगों से सड़ रही है।

(२६) सरदी लगने पर तम्बाखू आदि दवाई लेना विष को भीतर रखना है।

(३०) एडवर्ड सातवें बादशाह का डाक्टर कह गया है कि डाक्टर लोग रोगों के दुश्मन हैं।

(३१) अज्ञान के जमाने में दवाई का रिवाज शुरू हुआ था।

(३२) दवाइयें विष की बनती हैं और वे शरीर में विष बढ़ाती हैं।

(३३) शरीर में विष डालकर सुखी कौन हो सकता है?

(३४) जुलाब लेने से रोग भीतर रह जाता है किन्तु उपवास से रोग जड़मूल से नष्ट होकर आराम होता है।

(३५) उपवास करने वाले रोगी को मुह में और जीभ पर उत्तम स्वाद का अनुभव होवे तब रोग का नष्ट होना समझना चाहिये।

(३६) शरीर में जो रोग कार्य करता है वही काम दवाई करती है।

(३७) अनुभवी डाक्टर कहते हैं कि दवाई से रोगी ज्यादह बिगड़ते हैं।

(३८) दवाई न देना यह रोगीपर महान उपकार करने के समान है, केवल कुदरती पथ्य हवा, भावना आदि परम उपकारक है।

(३९) ज्यों २ डाक्टर बढ़ते हैं त्यों २ रोग और रोगी बढ़ते हैं।

(४०) डाक्टर घट जांय तो रोग और रोगी भी घट जाय।

(४१) रोगी के पेट में अन्न न डालने से रोग स्वयं ही नष्ट हो जाता है।

(४२) दवाई को निकम्मा समझ ले वही सच्चा डाक्टर है।

(४३) हाथ पैर आंख को आराम देते हैं वैसे उपवास करना यह जठर (पेट) को आराम देना है।

(४४) अमेरिका में डाक्टर लोग रोगी को उपवास कराके रात्रि को देखते रहते हैं कि शायद वह गुप्त रीति से खाना खा न ले।

(४५) मनिविन के बाद उपवास में कठिनाई मालूम नहीं पड़ती।

(४६) टूटी हड्डी का जुड़ना और बन्दूक की गोली की मार को भी उपवास से आराम पहुचता है।

(४७) पशु पक्षी भी रोगी होने के बाद तुरत आराम न हो वहा तक खाना पीना छोड़ देते हैं।

(४८) कफ पित्त और वायु में घट बढ़ होने से रोग होता है।

(४९) वायु का सात दिन में, पित्त का दस दिन में, कफ का रोग बारह दिन में अन्न न लेने से (उपवास करने से) आराम होता है और रोग नाश हो जाता है।

(५०) दवाई से थककर अमेरिकन डाक्टरों ने उपवास की अनादि सिद्ध दवाई शुरू की है।

(५१) जो दवाई नहीं करता है वह सब रोगियों से ज्यादह सुखी है।

(५२) भूख न लगना रोग नहीं है किन्तु जठराग्नि की नोटिस है कि पेट में माल भरा हुआ है। नव माल के लिये स्थान नहीं है। एकआध उपवास कीजियेगा।

(५३) उपवास करने से शरीर में दर्द होता है, चक्कर आते हैं, मुंह का स्वाद बिगड़ जाता है।

इसका प्रयोजन यह है कि शरीर में से रोग निकल रहा है।

(५५) लकवे जैसे भयङ्कर रोग भी उपवास से मिट जाते हैं।

(५५) गर्मी में तीन उपवास से रोग नष्ट होता है और वही रोग शर्द ऋतु में दो उपवास से नष्ट होता है।

शरीर सम्बन्धी नियम।

(१) मनुष्य शरीर बहुत पवित्र है परन्तु अज्ञानी लोग शारीरिक प्रकृति के विरुद्ध शराब, भङ्ग, अफीम गाजा, बीड़ी, सिगरेट तम्बाखू आदि अनेक नशीली चीजों का दुर्व्यसन सेवन करते हैं जिससे उनके फेफड़ों में विकार उत्पन्न हो जाता है और स्वास्थ्य को भारी धक्का पहुंचता है।

(२) जो लोग देश में उत्पन्न होने वाली दूध, दही, घृत आदि बलवर्द्धक वस्तुओं को छोड़ कर विदेशी चीजें-जैसे मोरस शक्कर की बनी हुई मिठाइयां, बिस्कुट, विदेशी दूध की टिकियां और वेजिटेबल घृत आदि आरोग्य

नाशक पदार्थों को काम में लाते हैं। वे स्वा
स्थ्य से हाथ धो बैठते हैं।

(३) मानसिक तथा शारीरिक परिश्रम करने वा
लों को महीने में चार दिन उपवास कर वि
श्राम लेना चाहिये। प्रत्येक कारखाने महीने
में चार दिन अर्थात् सप्ताह में एक दिन बन्द
रहते हैं। भगवान् महावीर ने फरमाया है
कि महीने में ६ दिन उपवास कर अपने आ
त्मकृत भले बुरे कामों का चिन्तवन करना
चाहिये। क्योंकि इससे सब राग नष्ट होते
हैं और विश्राम लेने से शक्ति बढ़ती है। जो
ऐसा नहीं करते उनकी मानसिक तथा शारी
रिक शक्ति अवश्य घट जाती है।

(४) मर्यादा पूर्वक सोने से भी शरीर तथा म
स्तिष्क को बहुत लाभ होता है परन्तु बहुत
से लोग इसका विचार न करके नाटक, सि
नेमा, वेश्यानृत्य देखने तथा खराब२ उपन्यास
आदि पढ़ने में निद्रा के समय को व्यर्थ ख
राब कर स्वास्थ्य बिगाड़ते हैं।

(५) यहां के देशवासियों की गर्म प्रकृति है जिन
के लिये यहीं की उत्पन्न हुई चीजों का सेवन

विशेष लाभदायक होता है और शरीर की तन्दुरुस्ती का बढ़ाने वाला होता है। पहिले मनुष्य लोग हाथकते सूत के कपड़े पहिनते थे। अब खराब संगति के कारण प्रायः सब जीवों के बलिदान का कारण मर्बी जाता हुआ मीलों द्वारा तैयार किया हुआ कपड़ा जरूरत से ज़ियादा पहिनकर अपने स्वास्थ्य को नष्ट करते हैं।

(१६) जो मनुष्य सूर्योदय होने तक सोते रहते हैं उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। इसलिए ज्ञानवान पुरुष ब्रह्म मुहूर्त्त में नींद खुलते ही उठकर ईश्वर स्मरण में अपना मन लगाते हैं। उनका शरीर तन्दुरुस्त रहता है। इस लिए सब मनुष्यों को अपनी नींद खुलते ही स्वास्थ्य की रक्षा के लिए चार घड़ी रात बाकी रहे उठना चाहिये। इसका वर्णन तुलसीदासजी व चाणक्य ने अपने ग्रन्थों में विस्तार पूर्वक किया है। यह तो रामायण पढ़ने वाले सर्व साधारण भलीभांति जानते हैं कि राम और लक्ष्मण मुर्गे की बांग की आवाज सुनकर शैया छोड़ देते थे।

(७) जो मैले और बदबूदार वस्त्र पहिनते हैं और मुह शुद्ध नहीं करते, हर समय बहुत खाते हैं और कटु शब्दों का प्रयोग करते हैं । सायंकाल होते ही सोजाते हैं और सूर्य उदय होने के पश्चात् उठते हैं। ऐसे मनुष्यों को चाहे वे देशाधिपति ही क्यों न हो लक्ष्मी उन को छोड़ देती है।

(८) सोते समय मुह खुला रहना चाहिये जिस से सांस लेने मे कठिनाई न हो। मुह ढककर सोना स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक है।

(९) रात्रि को जब ओस गिरे तब खुले मैदान में नहीं सोना चाहिये और खुले बदन और खुले शरीर बाहिर न निकलना चाहिये, क्यों कि इससे हाथ पैर टूटने लगते हैं और कभी कभी तो ज्वर भी आजाता है।

(१०) निर्द्धारित समय पर पेशाब व टट्टी हमेशा आना चाहिये। भूल कर भी टट्टी व पेशाब की हाजत नहीं रोकना चाहिये। अगर कब्ज मालूम हो तो उपवास कर थोड़ा २ गर्मपानी का सेवन करना चाहिये। इससे कब्ज़ मिट कर साफ दस्त लग जाती है।

(११) तालाब कुए, बावड़ी आदि गहरे जल में और वर्षा ऋतु में बहती हुई नदी में स्नान करना भयप्रद है, वैसे भी देखा जाय तो हाथ के सहारे स्नान करना बहुत साधारण व उपयोगी होता है। इसमें अधिक जल की आवश्यकता नहीं होती। बहुत से बगैर तैराक् लोग गहरे जल में उतर कर डुबकी लगाते हैं जिससे उनके मुंह व कानों के द्वारा शरीर में पानी पहुंचता है और अधिक जल पहुंचने से वे बहुत दुखी होते हैं। इसी तरह बहुत से मनुष्यों की पानी में डूब कर मृत्यु होजाती है। सभ्य और समझदार लोग घर पर ही स्नान करते हैं जिससे बन्द मकान के कारण ठण्ड भी मालूम नहीं होती और हवा के ठण्डे झोकों से बचाव भी होता है।

(१०) शरीर को साफ़ रखने के लिये हाथ से बने हुये हस्ताड़ों को काम में लाना चाहिये। सर्व इन्द्रियों में नेत्र मुख्य हैं! बिना नेत्रों के मनुष्य जीवन दुखदायी होजाता है इसलिये नेत्रों की रक्षा करना मनुष्य का सबसे पहिला कर्तव्य है। नेत्रों की रक्षा के लिये निम्नलि

लिंत नियमों का पालन करना आवश्यक है।

१-आंखें अच्छी तरह काम न दे व धुंधलाहट मालूम होने लगे तो लिखना पढ़ना बन्द करदो।

२-बहुत तेज रोशनी व बिजली की रोशनी में पढ़ने लिखने से नेत्रों को बहुत हानि पहुचती है।

३-कमजोर नेत्रों वालों को सूर्य्य की रोशनी के सामने टकटकी लगाकर नहीं देखना चाहिये और चलते फिरते अथवा रेलगाड़ी मोटर आदि में बैठे हुये पढ़ना लाभदायक नहीं है।

४-नेत्रों को त्रिफला तथा ठण्डे पानी से धोना भी लाभदायक है।

(१३) मनुष्यों को सिर के बाल नहीं बढ़ाना चाहिये। बालों को कटाकर छोटे करा लेना आवश्यक है। ऐसा करने से बालों की जड़ों पर कम भार पड़ता है और स्याही रहती है। बालों में तेल का मालिश करना भी लाभदायक है।

(१४) शुद्ध वायु और शुद्ध अन्न जल, वस्त्र आदि जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं ये जिस

प्रकार प्राप्त हो सकते हैं ? इसका विचार प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिये।

(१५) आरोग्यता का सादगी से बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। आडम्बर और फजूलखर्ची से कुछ भी लाभ नहीं होता। मनुष्यों को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये कि हमारे मकानों में प्रकाश आता है या नहीं तथा हवा काफी आती है अन्न, जल, वस्त्र शुद्ध काम में आते हैं या नहीं? हमारे घर के मनुष्य अच्छे तन्दुरुस्त तो रहते हैं। आदि बातों पर चिन्तन कर यथाशक्ति प्रबन्ध करना चाहिये।

(१६) स्वास्थ्य कायम रखने के लिये वायु स्नान, सूर्य के तेज का (अर्थात धूप का स्नान) भी लाभदायक है।

(१७) घर में प्रकाश तथा सफाई रखना नितान्त आवश्यक है।

(१८) मनुष्यों को अन्न जल, का अधिक आदर करना चाहिये। शुद्ध अन्न जल अधिक क्रिया से अर्थात् शुद्धता से तैयार होगा। वही तन्दुरुस्ती जियादा रहेगी।

(१९) जिन खाद्य पदार्थों पर-मिठाई, दूध, दहीं आदि पर मक्खियें जियादा बैठती हों उनको

काम में नहीं लाना चाहिये क्योंकि उनके बैठने से वे जहर के कीटाणु भोजन पर छोड़ जाती हैं। इसलिये इसका पूरा ध्यान रखना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।

(२०) जो मनुष्य उपवास नहीं करते उनके शरीर में निम्नलिखित रोगों में से एक आध तो जरूर हो ही जाता है। (अ) अधोवायु में दुर्गन्ध। (आ) मल में दुर्गन्ध (इ) खट्टी डकार या हिचकियें आना (ई) भोजन पर अरुचि। (उ) शरीर या पेट का भारीपन। जिनको ऊपर बताई हुई कोई शिकायत हो उसको उपवास द्वारा निवारण करना चाहिये। इन बीमारियों के लिये उपवास के बराबर दूसरी कोई दवाई लाभ नहीं पहुंचा सकती।

(२१) निरोग वही मनुष्य है जिसके निरोग शरीर में निरोग मन का निवास है।

(२१) आरोग्य की दृष्टि से मनुष्यों को पोशाक पर कुछ विचार करने से लाभ ही होगा क्योंकि वजनदार जेवर और चमकीली पोशाकों की सजावट में भारत रोगग्रस्त होरहा है अगर मनुष्य गहने और कपड़े शरीर पर कम लादे तो शरीर से बहुत लाभ उठा सकता है।

(२३) भगवान् महावीर स्वामी ने अपने कर्म रो
 क्षय करने के लिये और मनुष्यों में अहिंस
 धर्म फैलाने के लिये अनेक कष्ट सहन कि
 और स्वयं साढ़े बारह वर्ष और पन्द्रह दिन
 के (बेले) २२६, (तेले) तीन २ दिन के बारा
 एक २ पखवाड़े के बारह, और महीने २ के
 और डेढ़ २ मास के दो, दो २ मास के ६, औ
 ढाई २ मास के दो, तीन २ मास के २, चार
 महीने के ६, और छः २ महीने के दो उ
 वास किये और भोजन केवल ३४६ दिन
 किया है ।

(२४) त्याग और तप के बराबर उत्कृष्ट कोई
 दार्थ इस जगत में नहीं है, इससे द्रव्य रो
 और भाव रोग दोनों नष्ट होते हैं ।

(२५) जिनका शरीर कमजोर हो जिनके पैरों में
 रहता हो उनके लिये हमारी यही सम्म
 कि हाथकते सूत की धोती आदि कपड़े
 फर नगे पैर चलने का प्रयोग कर देखें ।
 स्वच्छ हवा में सुबह शाम घूमता है
 पुरुषार्थ करता हुआ ईश्वर भजन करता
 वह बहुत तन्दुरुस्त रहता है । ॐ शान्ति